मनुष्य क्या है?

अध्याय
दो

परमेश्वर का स्वरूप

THIRD MILLENNIUM MINISTRIES

Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2016 के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इन्टरनेशनल., 316 लाईव ओक रोड़., कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 से लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या छात्रवृत्ति के प्रयोजनों के लिए संक्षिप्त टिप्पणियों को छोड़कर किसी भी रूप में या लाभ प्राप्ति के लिए किसी भी तरह से पुन:उत्पादित नहीं किया जा सकता है।

यदि कहीं और नहीं बताया गया तो पवित्रशास्त्र की सभी टिप्पणियाँ हिन्दी की पवित्र बाइबिल से ली गई हैं। 1973, 1978, 1984, 2011 अंतरराष्ट्रीय बाइबिल सोसायटी © सर्वाधिकार सुरक्षित। जानडरवॉन बाइबिल प्रकाशक की अनुमति के द्वारा प्रयुक्त किए गये हैं।

थर्ड मिलेनियम की मसीही सेवा के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम मसीही सेवकाई एक लाभनिरपेक्ष मसीही संस्था है जो कि **मुफ्त में**, **पूरी दुनिया के लिये**, **बाइबल पर आधारित शिक्षा** मुहैया कराने के लिये समर्पित है। उचित, बाइबल पर आधारित, मसीही अगुवों के प्रशिक्षण हेतु दुनिया भर में बढ़ती मांग के जवाब में, हम सेमीनरी पाठ्यक्रम को विकसित करते हैं एवं बाँटते हैं, यह मुख्यतः उन मसीही अगुवों के लिये होती है जिनके पास प्रशिक्षण साधनों तक पहुँच नहीं होती है। दान देने वालों के आधार पर, प्रयोग करने में आसानी, मल्टीमीडिया सेमीनरी पाठ्यक्रम का 5 भाषाओं (अंग्रेजी, स्पैनिश, रूसी, मनडारिन चीनी और अरबी) में विकास कर, थर्ड मिलेनियम ने कम खर्च पर दुनिया भर में मसीही पासबानों एवं अगुवों को प्रशिक्षण देने का तरीका विकसित किया है। सभी अध्याय हमारे द्वारा ही लिखित, रुप-रेखांकित एवं तैयार किये गये हैं, और शैली एवं गुणवत्ता में द हिस्ट्री चैनल © के समान हैं। सजीवता के प्रयोग एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट चलचित्र उत्पादन के लिये थर्ड मिलेनियम 2 टैली पुरस्कार जीत चुका है, और हमारा पाठ्यक्रम 192 भी ज्यादा देशों में प्रयोग हो रहा है। हमारी सामग्री डी.वी.डी, छपाई, इंटरनेट, उपग्रह द्वारा टेलीविज़न प्रसारण, रेडियो, और टेलीविज़न प्रसार का रूप लेते हैं।

हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार से उसमें शामिल हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org. पर जाएँ।

विषय-वस्तु सूची

I. परिचय 1

II. पदवी 1

क. झूठे देवताओं की प्रतिमाएँ 2
1. मूर्तियाँ 2
2. राजा 4

ख. सच्चे परमेश्वर का स्वरूप 5
1. शब्दावली 5
2. यीशु 7
3. अधिकार 9

III. गुण 11

क. नैतिक 11

ख. तार्किकता 13

ग. आत्मिक 15

IV. सम्बन्ध 16

क. परमेश्वर 17
1. परमेश्वर के चरित्र का प्रतिबिम्ब 17
2. विशुद्ध आराधना का प्रचार 19
3. परमेश्वर के राज्य का निर्माण 19

ख. मानवीय प्राणी 20
1. प्रतिष्ठा 20
2. न्याय 22

ग. सृष्टि 22

V. सारांश 24

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

मनुष्य क्या है?

अध्याय दो

परमेश्वर का स्वरूप

परिचय

क्या आपने कभी ऐसे चित्रों को देखा है जिनमें छोटे बच्चों ने उनके माता-पिता को चित्रित किया होता है? वे अक्सर बहुत कुछ उनके माता-पिता की तरह ही दिखाई देती हैं, परन्तु माता-पिता फिर भी इन चित्रों को बहुत अधिक संभाल कर रखते हैं? उनके लिए, इन चित्रों का मूल्य उनकी कला की गुणवत्ता में नहीं है, अपितु उन अहसासों में जो उनके प्रति उनके बच्चों में हैं। यह बात कोई मायने नहीं रखती कि ये चित्र कितने ही खराब क्यों न बने हों, परन्तु ये उनके माता-पिता को प्रस्तुत करते हैं। और कुछ इसी तरह का सच आधुनिक मनुष्य के साथ भी है। हम परमेश्वर के सिद्ध चित्र नहीं हैं, परन्तु हम फिर भी उसके स्वरूप हैं। और यह हमें प्रतिष्ठा, सम्मान और अधिकार, के साथ इस संसार की सबसे उच्च बुलाहट को देता है।

यह *मनुष्य क्या है?*, के ऊपर हमारी श्रृंखला का दूसरा अध्याय है, और हमने इसका शीर्षक, "परमेश्वर का स्वरूप" दिया है, क्योंकि हम इस बात की जाँच करेंगे कि मनुष्य के लिए परमेश्वर के स्वरूप में रचे जाने के क्या अर्थ होते हैं।

इससे पहले के अध्याय में, हमने देखा कि परमेश्वर का स्वरूप होने का अर्थ परमेश्वर की एक प्रतिमा या चित्र के जैसे होना है। प्राचीन निकट पूर्व में, राजा की प्रतिमाओं को उसके नागरिकों को राजा की महानता और उसकी परोपकारिता अर्थात् कृपानिधान होने का स्मरण दिलाने के लिए उनके पूरे राज्य के चारों ओर खड़ा कर दिया जाता था, ताकि वे लोगों को राजा की आज्ञापालन करने के लिए प्रोत्साहित करें, और यह दिखाएँ कि राजा उनके लोगों के साथ उपस्थित था। कुछ इसी तरह से, मनुष्य परमेश्वर की समानता में रचा गया है। जैसा कि हम उत्पत्ति 1:27 में पढ़ते हैं:

> **तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उनको उत्पन्न किया; नर और नारी करके उसने मनुष्यों की सृष्टि की (उत्पत्ति 1:27)।**

मनुष्य एक ऐसा भौतिक प्रतिनिधित्व है जो परमेश्वर की सारी सामर्थ्य, अधिकार और भलाई की सृष्टि का स्मरण दिलाता है। और हमारे माध्यम से, वह संसार और इसमें रहने वाले प्राणियों के ऊपर अपने शासन को प्रगट करता है।

इस अध्याय में, हम परमेश्वर का स्वरूप होने के नाते मनुष्य की भूमिका के तीन पहलूओं के ऊपर ध्यान देंगे। प्रथम, हम परमेश्वर के स्वरूप होने को एक पदवी या पद जिस पर हम बने हैं, के रूप में देखेंगे। दूसरा, हम हमारे ध्यान को परमेश्वर के स्वरूप होने के नाते उन गुणों के ऊपर केन्द्रित करेंगे जो हमारे पास हैं। और तीसरा, हम परमेश्वर का स्वरूप होने के नाते हमारे सम्बन्धों के स्वभाव का वर्णन करेंगे। सबसे पहले हम हमारी पदवी को देखें।

पदवी

"परमेश्वर का स्वरूप" होने की पदवी उस अधिकार में निहित है जिसे परमेश्वर ने मनुष्य को दिया है। जैसा कि हमने पहले के अध्याय में देखा, परमेश्वर ने मनुष्य को उसकी ओर से उसकी सृष्टि के ऊपर शासन करने के लिए नियुक्त किया था। सुनिए उत्पत्ति 1:27-28 को:

> **तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया; नर और नारी करके उस ने मनुष्यों की सृष्टि की। और परमेश्वर ने उनको आशीष दी, और उन से कहा, "फूलो- फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले सब जन्तुओं पर अधिकार रखो (उत्पत्ति 1:27-28)।

परमेश्वर का स्वरूप होने के परिचय की पहचान कराने के तुरन्त पश्चात्, यह कहता है कि हमें सृष्टि के ऊपर शासन करना है। इसलिए, कम से कम परमेश्वर के स्वरूप में होने का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि हमें प्रतिनिधि शासक के रूप में इस पद को धारण करना है। धर्मवैज्ञानिक शब्दावली में, हम परमेश्वर के "उप-शासक" – अर्थात् उसके उप-प्रशासकीय अधिकारी हैं, या प्राचीन निकट पूर्व भाषा की शब्दावली में, उसके सेवक या "अधीनस्थ" राजा या जागीरदार है।

हम सबसे पहले हमारे पद या कार्य के ऊपर ध्यान इस बात की ओर देते हुए करेंगे कि कैसे बाइबल के इतिहास में झूठे देवताओं की प्रतिमाओं ने कार्य किया। और दूसरा, हम यह देखेंगे कि कैसे ये प्रतिमाएँ सच्चे परमेश्वर के प्रति हमारे स्वरूप की भूमिका के ऊपर प्रकाश डालती हैं। आइए झूठे देवताओं की प्रतिमाओं से आरम्भ करें।

झूठे देवताओं की प्रतिमाएँ

इस अध्याय में हमारे प्रयोजनों की प्राप्ति के लिए, हम हमारे ध्यान को झूठे देवताओं की दो तरह की प्रतिमाओं: मूर्तियों और राजाओं की ओर केन्द्रित करते हुए करेंगे जो प्राचीन निकट पूर्व में प्रचलित थी। आइए सर्वप्रथम मूर्तिओं को देखें।

मूर्तियाँ

हमारे अध्ययनों और प्राचीन निकट पूर्वी धर्मों के अनुसंधान के माध्यम से, हम जानते हैं कि मूर्तियों की पूजा बहुत अधिक प्रचलित थी। वे उनकी पूजा करते थे और उन्हें अपने लिए सामर्थ्य और कई आशीषों के स्रोत समझते थे। परमेश्वर ने उसके लोगों को उसकी या उसके जैसी मूर्तियाँ या चित्रों को गढ़ने के लिए मना किया था। इसका मुख्य कारण यह है कि परमेश्वर आत्मा है और वह किसी भौतिक शरीर या स्वरूप में परिभाषित नहीं किया जा सकता है। परमेश्वर की सामर्थ्य और उसका वैभव उसे मना करता है कि वह हमें अनुमति दे कि हम उसकी आराधना अन्य चीजों जो मूर्त हैं, के माध्यम से करें।

- डॉ. राईड कासिस, अनुवादित

मूर्तियाँ विशेष रूप से हाथों-से-बने हुए स्वरूप थे। परन्तु उनका लक्ष्य देवताओं को मात्र दृश्य प्रस्तुतीकरण के लिए नहीं था। जब एक मूर्ती को गढ़ा जाता था, तो यह विचार किया जाता था जिस देवता को यह प्रस्तुत करती थी वह आत्मिक रूप से मूर्ति में वास या निवास करता था। इसलिए ही प्राचीन धर्मों ने अपनी मूर्तियों का पूजन किया। उन्होंने विश्वास किया कि प्रतिमाएँ ऐसे मध्यस्थ जिनके माध्यम से देवता उनके लोगों में उपस्थित होता था। इस तरह से, मूर्तियाँ उनकी प्रतिनिधि बन गईं, और यहाँ तक कि स्वयं देवताओं का विकल्प बन गईं।

इस मान्यता का सबसे प्राचीन ऐतिहासिक प्रमाण एक मिस्री *स्टेला,* या खुदे हुए पत्थर में पिरामिडों के युग के दौरान, लगभग तीसरी सदी ईसा पूर्व, के आसपास पाया जाता है। यह वर्णन करता है कि पाथ नामक देवता ने अन्य देवताओं के रहने के लिए मूर्तियों की रचना की। जेम्स हेनरी ब्रेस्टड द्वारा लिखित, *प्राचीन मिस्र में धर्म और विचार का विकास,* 1912 में प्रकाशित पुस्तक में दिए हुए शिलालेख के इस भाषान्तरण को सुनिये:

अपने मनों की सन्तुष्टि के लिए [पाथ] ने अपने शरीरों की प्रतिमाओं को रचा। तब देवताओं ने अपने शरीरों के बने हुए प्रत्येक काठ और प्रत्येक पत्थर और प्रत्येक धातु में प्रवेश किया।

हबक्कूक भविष्यद्वक्ता ने हबक्कूक 2:18-19 में इस मान्यता की आलोचना की है, जहाँ उसने ऐसे लिखा:

खुदी हुई मूरत में क्या लाभ देखकर बनानेवाले ने उसे खोदा है?... हाय उस पर जो काठ से कहता है, "जाग, वा अबोल पत्थर से, उठ!" क्या वह सिखाएगा? देखो, वह सोने चान्दी में मढ़ा हुआ है; परन्तु उस में आत्मा नहीं है (हबक्कूक 2:18-19)।

जिन झूठे धर्मों की आलोचना हबक्कूक ने की वे यह विश्वास करते थे कि एक दिव्य तरल या श्वास इन मूर्तियों के भीतर वास करता है, जिसका अर्थ यह है कि उनके देवता सुन सकते थे और कदाचित् इन मूर्तियों के माध्यम से उन्हें प्रत्युत्तर दें। परन्तु हबक्कूक ने जोर देकर कहा कि इस तरह की दिव्य उपस्थिति इन देवताओं के भीतर नहीं थी।

ठीक इसी तरह, यशायाह 44 में, परमेश्वर ने मूर्तियों के उपयोग का उपहास इस बात की ओर संकेत करते हुए उड़ाया है कि एक बढ़ई एक मूर्ति को उसी काठ से गढ़ सकता है जिसका उपयोग आग जलाने और उसके भोजन को पकाने के लिए किया जाता हो। यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मूर्तियाँ किसी तरह से विशेष नहीं थी। परन्तु मूर्तिपूजक इतने ज्यादा मोहित हो जाते हैं कि वे उस झूठ की पहचान नहीं कर सकते हैं जिसे वे कह रही हैं। जैसा कि हम यशायाह 44:13-20 में पढ़ते हैं:

बढ़ई... देवदार को काटता वा वन के वृक्षों में से जाति जाति के बांजवृक्ष चुनकर सेवता है... [कुछ] मनुष्य के ईंधन के काम में आता है; वह उस में से कुछ सुलगाकर तापता है, वह उसको जलाकर रोटी बनाता है; उसी से वह देवता भी बनाकर उसको दण्डवत् करता है; वह मूरत खुदवाकर उसके सामने प्रणाम करता है... [कोई] कुछ नहीं जानते, न कुछ समझ रखते यह कहें कि..."क्या मैं काठ को प्रणाम करूँ?... क्या मेरे दाहिने हाथ में मिथ्या नहीं?" (यशायाह 44:13-20)।

प्राचीन मूर्तिपूजकों ने यह विश्वास किया कि जब वे उनकी मूर्तियों को भोजन की भेंट चढ़ाते या उन्हें तेल से अभिषेक करते हैं, या किसी अन्य तरीके से उनकी पूजा करते हैं, तो उनके देवता इससे महिमा पाते और उनके इस ध्यान से लाभ प्राप्त करते थे। परन्तु वास्तविकता में, मूर्तिपूजक शक्तिहीन थे, और वे किसी भी तरह की कोई आत्मा के द्वारा उनमें वास नहीं करते थे। पवित्रशास्त्र शिक्षा देता है कि कुछ *झूठे* देवता वास्तव में दुष्टआत्माएँ थीं, जैसा हम व्यवस्थाविवरण 32:17; भजन संहिता 106:37 और 1 कुरिन्थियों 10:20 से सीखते हैं। *अन्य* झूठे देवता पूरी तरह से कल्पना थे। और सभी घटनाओं में, एक मूर्तिपूजक मूल्यहीन और शक्तिहीन है।

पवित्रशास्त्र यह इन्कार नहीं करता है कि मूर्तियाँ देवताओं की प्रतिमाएँ हैं। यह केवल इस बात पर सामान्यत: जोर देता है कि जिन देवताओं को यह प्रस्तुत करती हैं वे झूठे हैं, और यह कि प्रतिमाएँ शक्तिहीन हैं। परन्तु ये झूठे धर्म चाहे जितने भी गलत क्यों न हो, वे फिर भी हमें इस बात को समझने में सहायता प्रदान करते हैं कि कैसे प्राचीन लोगों ने "परमेश्वर के स्वरूप" की शब्दावली को समझा। वे हमें दिखाते हैं कि प्राचीन पाठकों के लिए, एक देवता की प्रतिमा एक पवित्र वस्तु थी। प्रतिमाएँ या स्वरूप देवताओं को प्रस्तुत करते थे। उन्होंने देवताओं में विश्वास को प्रेरित और व्यक्त किया। उन्होंने देवताओं की ख्याति को विस्तार दिया। और उनके बारे में सोचा कि वे देवताओं के ऐसे पात्र थे जो देवता को उनके लोगों के साथ उपस्थित होने और उन्हें आशीष देने को दिखाते थे।

यह देख लेने के पश्चात कि कैसे मूर्तियों ने झूठे देवताओं के स्वरूप या प्रतिमा के रूप में कार्य किया। आइए हम मानवीय राजाओं की मुड़ें।

राजा

प्राचीन निकट पूर्व की कई संस्कृतियों में, राजाओं को अपने देवताओं की सेवा किए जाने वालों के "स्वरूपों" के रूप में पुकारा जाता था। ऐसा आंशिक रूप से इसलिए था क्योंकि राजाओं के लिए सोचा जाता था कि उनकी पहुँच देवताओं की विशेष उपस्थिति तक थी, ठीक उसी तरीके से जिसमें यह सोचा जाता था कि देवता मूर्तियों में उपस्थित था। और ऐसा आंशिक इसलिए था क्योंकि राजा देवताओं की इच्छा प्रतिबिम्बित करता था या

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

देवता की इच्छा का साक्षात स्वरूप था। राजाओं को देवताओं के ज्ञान और इच्छा को जानना जरूरी था, और फिर इसे अपने पूरे राज्य में लागू करना था।

उदाहरण के लिए, ईसा पूर्व 1550 के लगभग मिस्र के नए राज्य की अवधि के दौरान, फिरौन ने स्वयं को विभिन्न देवताओं के स्वरूपों के रूप में इंगित करना आरम्भ कर दिया। और यह प्रथा बड़ी अच्छी तरह से पुराने नियम की अवधि के समय तक निरन्तर चलती रही। हम अमोसिस- I को जानते हैं, जिसने ईसा पूर्व 16 वीं सदी में शासन किया, को "ऋ का स्वरूप," अर्थात् सूर्य देवता कह कर पुकारा जाता था। अमोनिफिस- III, जिसने ईसा पूर्व 14वीं सदी में शासन किया, को देवता अम्मोन के द्वारा "मेरा जीवित स्वरूप" कह कर पुकारा गया है। और देवता अम्मोन-ऋ ने अमोनिफिस- III से कहा कि, "तू मेरा प्यारा पुत्र...मेरा स्वरूप... है। मैंने तुझे शान्ति के साथ इस पृथ्वी पर शासन करने का अधिकार दिया है।" जैसा कि हम इन संदर्भों में देखते हैं, फिरौन को देवताओं का स्वरूप या छवि के रूप में देखा जाता था क्योंकि वे देवताओं के पार्थिव राज्यों के ऊपर शासन करते थे। ऐसा सोचा जाता था कि परमेश्वर ने उन्हें विशेष कृपा दी होती थी, उनके साथ निकटता का सम्पर्क रखा होता था, और राजा से उनकी इच्छा को पूरी करने की अपेक्षा की होती थी।

हम इसी जैसा कुछ मेसोपोटामिया के राज्यों जैसे अश्शूर में देखते हैं, यद्यपि यह प्रथा यहाँ पर बहुत कम दिखाई देती है। विभिन्न राजाओं को सूर्य देवता शामाश का स्वरूप, माद्रुक का स्वरूप जो कि अश्शूरी देवताओं का शासक था, और बेल, अर्थात् यहोवा, जो को माद्रुक का एक और नाम भी था, के स्वरूप थे। और कई बार, उन्हें सामान्यत: एक देवता के स्वरूप से, बिना किसी विशेष देवता का नाम लिए पहचाना जाता था। उदाहरण के लिए, *अश्शूर राज्य का अभिलेखागार* नामक पुस्तक के खण्ड 10, के अध्याय 10 में, याजक अदाद-शूमू-ऊसूर की ओर से राजा इश्रादद्दोन को लिखा हुआ एक पत्र मिलता है। इसे ईसा पूर्व 681 और 669 के मध्य कहीं, अदाद-शूमू-ऊसूर ने लिखा था:

मनुष्य एक देवता की छाया है...परन्तु राजा एक देवता का स्वरूप है।

एक पहले के पत्र में, अदाद-शूमू-ऊसूर ने कहा था कि दोनों इश्रादद्दोन और उसका पिता, अश्शूर का सम्राट सन्हेरीब, बेल देवता के स्वरूप थे। इस तरह से, उसका संकेत इश्रादद्दोन के लिए *विशेष रूप* से यह नहीं था कि वह एक देवता का स्वरूप था। इसकी अपेक्षा, अदाद-शूमू-ऊसूर यह कह रहा था कि राजाओं के अन्य लोगों की अपेक्षा देवताओं के साथ घनिष्ठता का सम्बन्ध था। और इसलिए, राजा लोगों की अपेक्षा देवताओं के ज्यादा समान्तर थे।

अदाद-शूमू-ऊसूर के शब्दों में, "मनुष्य एक देवता की छाया है," का संकेत यह हो सकता है कि प्राचीन निकट पूर्व में स्वरूपों के विभिन्न पदों को पहचान लिया था। हो सकता है कि उन्होंने यह विश्वास किया हो कि राजा देवताओं के सच्चे स्वरूप थे, परन्तु यह कि निम्न पदवी वाले लोग कुछ सीमा तक दिव्य स्वरूप थे - वे एक देवता के वास्तविक स्वरूप की अपेक्षा उसकी छाया थे।

किसी भी घटना में, "परमेश्वर के स्वरूप" की यह शब्दावली हमें यह समझने में सहायता करती है कि कैसे मूसा के वास्तविक पाठकों ने उत्पत्ति में उसकी शिक्षाओं को स्वीकार किया होगा। वे यह सुझाव देते हैं कि प्राचीन पाठकों ने राजाओं को उनके देवताओं के प्राथमिक स्वरूप के रूप में देखा होगा क्योंकि राजाओं ने देवताओं के अधिकार और इच्छा को देखा था। इसके परिणामस्वरूप, जब उन्होंने "परमेश्वर के स्वरूप" शब्दावली को मनुष्य के ऊपर लागू होते हुआ सुना, तो उन्होंने आसानी से पता लगा लिया होगा कि यह राजा के पद के लिए बात कर रहा है।

अब क्योंकि हमने "परमेश्वर के स्वरूप" की पदवी के ऊपर यह देखते हुए ध्यान दे दिया है कि कैसे बाइबल के इतिहास के समय में झूठे देवताओं की प्रतिमाएँ कार्य करती थीं, इसलिए आइए यह देखें कि कैसे पवित्रशास्त्र मनुष्य को सच्चे परमेश्वर के स्वरूप में होने का वर्णन करता है।

सच्चे परमेश्वर का स्वरूप

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

उत्पत्ति 1 हमें बताता है के सृष्टि किए जाने वाले सप्ताह के मध्य, परमेश्वर ने सारी सृष्टि की रचना और व्यवस्था की। और सृष्टि के अपने अन्तिम कार्य के रूप में छठे और सप्ताह के अन्तिम कार्य दिवस में, उसने मनुष्य की रचना की। उत्पत्ति 1:26 को सुनें:

फिर परमेश्वर ने कहा, " हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएँ; और वे समुद्र की मछलियों, और आकाश के पक्षियों, और घरेलू पशुओं, और सारी पृथ्वी पर, और सब रेंगनेवाले जन्तुओं पर जो पृथ्वी पर रेंगते हैं, अधिकार रखें" (उत्पत्ति 1:26)।

पहली बात जो पवित्रशास्त्र मनुष्य के बारे में कहता है वह यह है कि हम परमेश्वर के स्वरूप और समानता हैं। यह कई प्राथमिक तरीकों में से एक है जिसमें परमेश्वर मनुष्य जाति के बारे में सोचता है।

इसलिए, जब बाइबल मनुष्य के बारे में बात करती है कि वह परमेश्वर के स्वरूप और समानता में बना है, तो वह वास्तव में आवश्यक रूप से क्या कह रही है, वह यह है कि जो कुछ मनुष्य है, जो कुछ मनुष्य करता है, वह परमेश्वर का *स्वरूप* होता है। और शब्दावली, एक दूसरे को योग्य ठहराती है। इस तरह से, हम परमेश्वर का स्वरूप हैं। और शब्द "समानता" आगे परिभाषित करती है कि यह क्या है। हम अक्षरश: प्रतिलिपि नहीं हैं, हम परमेश्वर की अक्षरश: प्रतिलिपि नहीं हैं। हम परमेश्वर की समानता में हैं; इस तरह से यह एक प्रतिनिधित्ववादी सक्रियता है, न कि एक स्थिर प्रतिलिपि है। सब कुछ जो हम हैं वह परमेश्वर का स्वरूप है...हम इस तथ्य की सच्चाई को खो नहीं सकते हैं कि आवश्यक विचार यह है कि जब परमेश्वर एक प्राणी की रचना करना चाहता था तो वह यह था कि मनुष्य उसे प्रस्तुत करे, इसलिए उसने मनुष्य की रचना की।

- रेव्ह. रिक् रोडहिव्वर

मनुष्य का सच्चे परमेश्वर के स्वरूप के रूप में होने के ऊपर हमारा विचार विमर्श तीन भागों में विभाजित होगा। प्रथम, हम स्वरूप और समानता की बाइबल आधारित शब्दावली की खोज करेंगे। दूसरा, हम यीशु को परमेश्वर के सम्पूर्ण स्वरूप होने के ऊपर ध्यान देंगे। और तीसरा, हम परमेश्वर के स्वरूप के रूप में हमारे अधिकार का वर्णन करेंगे। आइए सबसे पहले स्वरूप और समानता की शब्दावली को देखें।

शब्दावली

शब्द "स्वरूप," या इब्रानी भाषा में *सेलम* और "समानता," या इब्रानी भाषा में *डीमूथ* का अर्थ एक जैसा नहीं है। परन्तु वे कई तरीके से एक दूसरे को अपने में ढक लेते हैं। एक "स्वरूप" एक खुदी हुई या ढाली हुई मूर्ति हो सकती है जैसा कि गिनती 33:52; 2 राजा 11:18; और यहेजकेल 7:20 और 16:17 में पाया जाता है। यह एक प्रतीक हो सकता है, जैसे कि सोने के चूहे जो कि 1 शमूएल 6:5, 11 में वाचा के सन्दूक के साथ लौटाए गए थे। और यह एक प्रतिबिम्ब या छाया हो सकती है, जैसा कि भजन संहिता 39:6 और भजन संहिता 73:20 में मिलता है।

इसके विपरीत, शब्द "समानता" की पहचान एक मूर्ति के साथ नहीं होती है। परन्तु यह 2 इतिहास 4:3 में पीतल के बैलों की प्रतिमाओं के लिए संकेत दे सकती है। यह साथ ही अपनी पहचान 2 राजा 16:10 में एक वेदी के लिए बनाए हुए रेखाचित्र या नक्शे से कर सकती है। और पूरे पुराने नियम की भविष्यद्वाणियों की रचनाओं में, यह किसी की तुलना किसी दूसरे के प्रगटीकरण या उसकी ध्वनि के साथ करते हुए वर्णित की गई है। उदाहरण के लिए, यशायाह 13:5 में, पहाड़ों की गड़गड़ाहट एक बड़ी भीड़ की आवाज की *समानता* में थी। और भविष्यद्वक्ता यहेजकेल ने *समानता* की व्याख्या यहेजकेल 1 और 10 में परमेश्वर के रथ के सिंहासन से किया है जहाँ पर ऐसे प्राणी हैं जो विभिन्न पशुओं और झलकाए हुए पीतल जैसे दिखाई देते थे। और दानिय्येल 10:16 में, भविष्यद्वक्ता एक स्वर्गीय सन्देशवाहक के बारे में वर्णन करता है जिसके पास एक मनुष्य की "समानता" या ढाँचा था यद्यपि ये दोनों एक दूसरे के सदृश नहीं हैं, स्वरूप और समानता के अर्थ एक दूसरे को ढक लेते हैं क्योंकि ये दोनों ही एक उच्चत्तम वास्तविकता की प्रतिमा या रेखाचित्र का वर्णन करते हैं। कुछ इसी तरह से, मनुष्य परमेश्वर के स्वरूप और

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

समानता में है क्योंकि हम परमेश्वर की सामर्थ्य, अधिकार और भलाई की प्रतिमा हैं। सन्देहरहित, हमारा सामर्थ्य, अधिकार और भलाई उसकी तुलना में अत्यन्त छोटा है। परन्तु यह फिर भी उसकी ओर ही संकेत कर रहा है।

अब, कई धर्मशास्त्री यह विश्वास करते हैं कि जब स्वरूप और समानता को इकट्ठे उपयोग किया जाता, तो उनका सामूहिक अर्थ एक दूसरे को ढकने की अपेक्षा विस्तृत होता है। विशेष रूप से, वह यह तर्क देते हैं कि जबकि "स्वरूप" परमेश्वर के साथ हमारी सदृश्यता की ओर, "समानता" परमेश्वर और मनुष्य के मध्य हमारी भिन्नता की ओर संकेत करता है, ताकि हम गलती से यह अनुमान न लगा लें कि हम अक्षरश: उसी के सदृश हैं।

उत्पत्ति 1:26 के अतिरिक्त, पुराने नियम में केवल एक ही और वचन: उत्पत्ति 3:15 है, जहाँ पर "स्वरूप" और समानता" को इकट्ठे उपयोग किया गया है। यहाँ, शेत के लिए कहा गया है कि वह दोनों अर्थात् अपने पिता आदम के स्वरूप और समानता में था। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि पार्थिव पिता का स्वरूप और समानता परमेश्वर के स्वरूप और समानता में बहुत अधिक भिन्न है। आदम और शेत दोनों ही मनुष्य थे, परन्तु परमेश्वर मात्र परमेश्वर है। जैसा कि पौलुस रोमियों 3:30 में लिखता है:

क्योंकि एक ही परमेश्वर है (रोमियों 3:30)।

हम इस तरह के कथनों को 1 कुरिन्थियों 8:6 और याकूब 2:19 में पाते हैं।

पवित्रशास्त्र बहुतायत के साथ स्पष्ट करता है कि हम छोटे ईश्वर नहीं हैं, और हम भविष्य में ईश्वर भी नहीं बनेंगे। यहाँ तक कि जब हम नए स्वर्ग और नई पृथ्वी पर महिमा को पाएँगे, हम तौभी मात्र प्राणी ही रहेंगे, और परमेश्वर तौभी हमारी अपेक्षा असीमित रूप से महान होगा। तौभी, आदम और शेत के मध्य सदृश्यता हमें यह सूचित करती है कि हम स्वयं को परमेश्वर के गुणों के प्रतिबिम्बों से कुछ ज्यादा देखें।

> **जब हम मनुष्य को परमेश्वर के स्वरूप में होने के बारे में सोचते हैं, तो हम पाते हैं कि ऐसे बहुत से तरीके हैं जिनमें हम उसके सदृश हैं और फिर बहुत से तरीके हैं जिनमें हम सदृश नहीं हैं। तब स्मरण रखने योग्य बात यह है कि जब यह हमें ईश्वरीय स्वरूप में होने की लिए सूचित करता है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि हम छोटे ईश्वर हैं...दूसरे शब्दों में, हम उसके *जैसे* कुछ निश्चित कार्यों को, ठीक उसी तरह से करने योग्य हैं। अर्थात्, हम सृष्टि करने के योग्य हैं। हम *ऐक्स निहीलो* अर्थात् कुछ नहीं में से कुछ नहीं रच सकते हैं, परन्तु जब कभी हम मनुष्य को एक रचने वाले सृजनशील प्रतिनिधि के रूप में देखते हैं, तब यह ईश्वरीय स्वरूप का एक प्रतिबिम्ब है। हम साथ ही नैतिक प्रतिनिधि भी हैं। सच्चाई यह है कि हम विकल्पों को उत्पन्न करने के योग्य हैं, हम चुनने के योग्य हैं कि गलत के ऊपर सही क्या है; सच्चाई यह है कि हमारे पास नैतिक प्रतिनिधि होने की क्षमता भी ईश्वरीय स्वरूप का प्रतिबिम्ब है। और सच्चाई यह है कि हम परमेश्वर का अनुसरण करते हुए उसके विचारों को सोच और ईश्वरीय मनन कर सकते हैं, यह सभी वे तरीके हैं जिसमें हम उसके जैसे हैं।**
>
> **- डॉ. केन कीथले**

स्वरूप और समानता की बाइबल आधारित शब्दावली से धर्मवैज्ञानिक विविध तरह के धर्मसिद्धान्तों के निष्कर्ष निकालते हैं। कुछ अपने ध्यान को परमेश्वर की सृष्टि के ऊपर अपने स्वयं के अधिकार को केन्द्रित करते हैं। अन्य उस वास्तविक कार्य को जिसे हम करते हैं के बारे में बात करते हैं। और अन्य इस तथ्य पर जोर देते हैं कि हम परमेश्वर के बहुत से गुणों को उन तरीकों में साझा करते हैं जो हमें पशुओं से भिन्न करता है। और यह सभी दृष्टिकोण सच्चे हैं। हम परमेश्वर का स्वरूप और समानता हैं क्योंकि हम पृथ्वी के ऊपर शासन परमेश्वर के सेवक राजा के नाते करते हैं, और हमें आवश्यक गुणों और क्षमताओं के साथ हमारे कर्तव्यों का पालन करने की सामर्थ्य प्रदान की गई है।

स्वरूप और समानता की शब्दावली के संदर्भों में सच्चे परमेश्वर के स्वरूप की हमारी पदवी के ऊपर ध्यान दे लेने के पश्चात्, आइए हम यीशु हमारे सिद्ध नमूने की ओर मुड़ें।

यीशु

परमेश्वर के देहधारी होने के नाते, यीशु ही पृथ्वी पर एकमात्र सिद्ध मनुष्य है। वह पूर्ण रीति से पापरहित और अपने सारे मानवीय गुणों में पूर्ण रीति से सिद्ध है। इसके अतिरिक्त, मसीह या मसीहा होने के नाते, वह

परमेश्वर के राज्य के ऊपर मानवीय राजा भी है। और इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि परमेश्वर की विशेष उपस्थिति किसी भी अन्य प्राणी के अतिरिक्त उसमें सबसे ज्यादा वास करती है, क्योंकि वह स्वयं परमेश्वर है। इस लिए, चाहे हमारे पास परमेश्वर का स्वरूप क्यों न हो, हमें यीशु की ओर हमारे लिए एक स्वरूप कैसा होना चाहिए को पाने के लिए सिद्ध नमूने के रूप में ताकते रहना चाहिए।

2 कुरिन्थियों 4:4-5 में, प्रेरित पौलुस ऐसे लिखता है:

अविश्वासी... मसीह जो परमेश्वर का प्रतिरूप है, उसके तेजोमय सुसमाचार का प्रकाश उन पर न चमके। क्योंकि हम अपने को नहीं, परन्तु मसीह यीशु को प्रचार करते हैं, कि वह प्रभु है; और उसके विषय में यह कहते हैं, कि हम यीशु के कारण तुम्हारे सेवक हैं (2 कुरिन्थियों 4:4-5)।

इस प्रसंग में, पौलुस परमेश्वर के स्वरूप को यीशु के साथ ऐसे पहचान करता है जो कि उसे बाकी के अन्य सभी मनुष्यों से भिन्न कर देता है। सबसे पहले, वह परमेश्वर के स्वरूप को परमेश्वर की महिमा के रूप में यीशु की ईश्वरीय महिमा के साथ सम्बद्ध करता है। और दूसरा, वह यीशु के प्रभु या राजा होने की मानवीय पदवी के ऊपर प्रकाश डालता है।

परमेश्वर का सिद्ध स्वरूप होने के नाते, यीशु ईश्वरीय महिमा को इस तरीके से प्रदर्शित करता है जिसे कोई भी सृष्टि की हुई वस्तु प्रगट नहीं कर सकती है। कुलुस्सियों 2:9 में, पौलुस शिक्षा देता है कि परमेश्वर पूरी तरह से मसीह में, अपने लिए कुछ न छोड़ते हुए, वास करता है, ताकि मसीह में परमेश्वर का गुण उपस्थित और प्रगट हो। और इसके परिणामस्वरूप, जब यीशु अपनी महिमा को प्रगट करता है – जिसे अक्सर एक महान ज्योति के रूप में जाना जाता है – तो वह दृश्य रूप में हमारे त्रिएक परमेश्वर को प्रस्तुत करता है। परन्तु उसकी महिमा का प्रकाशन इससे भी अधिक गहनता में जाता है। परमेश्वर की महिमा में उसके स्वयं का निहित होना, उसकी ख्याति, और उसकी प्रशंसा जिसे वह प्राप्त करता है, भी सम्मिलित है। और यह सभी वस्तुएँ परमेश्वर में मसीह के साथ सत्य हैं। जैसा कि इब्रानियों का लेखक इब्रानियों 1:3 में कहता है:

पुत्र उसकी महिमा का प्रकाश और उसके तत्व की छाप है (इब्रानियों 1:3)।

स्वयं यीशु ने यूहन्ना 14:9 में लिखा है कि:

जिसने मुझे देखा है उसने पिता को देखा है (यूहन्ना 14:9)।

पौलुस ने यह भी कहा कि यीशु परमेश्वर का एक आदर्श स्वरूप है क्योंकि वह प्रभु है। शब्द "प्रभु" का संकेत इस सच्चाई की ओर है कि यीशु राजा है जो सिद्धता के साथ परमेश्वर के शासन को उसकी सृष्टि के ऊपर चलता है। परमेश्वर का उप-प्रतिनिधि या अधीनस्थ राजा अर्थात् जागीरदार होने के नाते, सारी की सारी मनुष्य जाति को उत्पत्ति 1:26-28 में दिए हुए दायित्व को पूरा करने का आदेश दिया गया है। परन्तु छुटकारा पाए हुए मनुष्यों के ऊपर राजा होने के नाते, और परमेश्वर की व्यवस्था को निर्दोषता के साथ संभाले रखने के नाते, यीशु इस पदवी को पूर्णता के साथ पूरा करता है। सुनिए कैसे पौलुस परमेश्वर के स्वरूप होने के रूप में यीशु की महिमा और उसके राजा होने को कुलुस्सियों 1:13-18 में वर्णित करता है:

[पिता] उसी हमें अन्धकार के वश से छुड़ाकर अपने प्रिय पुत्र के राज्य में प्रवेश कराया... वह तो अदृश्य परमेश्वर का प्रतिरूप और सारी सृष्टि में पहिलौठा है। क्योंकि उसी में सारी वस्तुओं की सृष्टि हुई, स्वर्ग की हो अथवा पृथ्वी की, देखी या अन्देखी, क्या सिंहासन, क्या प्रभुताएँ, क्या प्रधानताएँ, क्या अधिकार, सारी वस्तुएँ उसी के द्वारा और उसी के लिये सृजी गई हैं। और वही सब वस्तुओं में प्रथम है, और सब वस्तुएँ उसी में स्थिर रहती हैं... और वही देह, अर्थात् कलीसिया का सिर है; वही आदि है और मरे हुओं में से जी उठनेवालों में पहिलौठा कि सब बातों में वही प्रधान ठहरे (कुलुस्सियों 1:13-18)।

यीशु परमेश्वर का स्वरूप है क्योंकि उसके पास प्रत्येक क्षेत्र का अधिकार है। वह अपने स्वयं के राज्य का राजा है। वह सारी सृष्टि में पहिलौठा है, अर्थात्, उसके पास सृष्टि के ऊपर पूर्ण अधिकार की मीरास है। वह सारी

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

प्रधानताओं का रचनेहारा है, अर्थात् उसका अपना अधिकार उनसे कहीं अधिक है। वह कलीसिया का सिर या प्रधान है, और उसके पास पहिलौठा होने का और महिमामयी मनुष्य होने का सम्मान है। इन सभी तरीकों से, यीशु परमेश्वर की सामर्थ्य और महिमा का सिद्ध प्रस्तुतिकरण है, और परमेश्वर के शासन होने और अधिकार का जिसे कैसे दिखाई देना चाहिए जब एक मनुष्य के द्वारा व्यक्त किया जाता है, का सिद्ध नमूना है।

यीशु परमेश्वर का सिद्ध स्वरूप है। यीशु द्वितीय आदम है, जैसा की हम 1 कुरिन्थियों 15:45 में पढ़ते हैं, कि वह "अन्तिम आदम" है जो कि परमेश्वर की ही सामर्थ्य था। और परमेश्वर की असामान्य सामर्थ्य यीशु की सिद्धता में प्रदर्शित हुई क्योंकि वह ऐसा मनुष्य बन गया जिसने कोई पाप नहीं किया, एक ऐसा मनुष्य जो पाप से उत्पन्न नहीं हुआ था। यदि हम मत्ती 1:19 और 20 को देखें, तो हम देखते हैं कि यीशु का आत्मा यूसुफ और मरियम या आदम की वंशावली से नहीं आया था, अपितु पवित्र आत्मा की ओर से आया था। इसलिए,उसका जीवन ऐसा जीवन था जो उसके भीतर से ही सिद्ध था; उसकी पवित्रता भीतर से ही सिद्ध थी, भले ही उसने मानवीय मांस और लहू को क्यों नहीं अपने ऊपर ओढ़ लिया। और यीशु परमेश्वर का सिद्ध स्वरूप था क्योंकि वह पाप में नहीं गिरा, यद्यपि उसने मनुष्य होने के नाते कमज़ोरी को अनुभव किया – इब्रानियों 4:15 – परन्तु उसने किसी तरह का कोई पाप नहीं किया। उसने अपने विचारों में भी किसी तरह का कोई पाप नहीं किया; उसने अपने बोलचाल में भी किसी तरह का कोई पाप नहीं किया; उसने अपने कार्यों में भी किसी तरह का कोई पाप नहीं किया। अपने पूरे जीवन में, जब तक उसने अपने कार्यों को इस संसार में परमेश्वर का मनुष्य होने के नाते पूरा नहीं कर लिया, उसने किसी तरह का कोई पाप नहीं किया। यह परमेश्वर का सिद्ध स्वरूप है; यह सिद्ध जीवन का नमूना है, जिसे यीशु मसीह ने दिया।

- योहनॉस प्राप्टोवार्सो, पी एच डी., अनुवादित

कोई भी अन्य मनुष्य परमेश्वर को इतनी सिद्धता से प्रस्तुत नहीं कर सकता है जैसा यीशु ने किया। परन्तु फिर भी, हम अभी भी परमेश्वर का स्वरूप हैं, और मात्र उसकी छाया नहीं हैं, जैसा अश्शूरियों ने विश्वास किया था। हम अभी भी उसकी ओर से शासन करते हैं, उसकी इच्छा को पूरा करते हैं, और उसकी महिमा को प्रगट करते हैं। हम इन कार्यों को ठीक वैसे ही करते हैं जैसे कि यीशु ने किया था, परन्तु हम इन्हें फिर भी करते हैं।

पुरूष...परमेश्वर का स्वरूप और महिमा है (1 कुरिन्थियों 11:7)।

अभी तक, हमने स्वरूप और समानता की शब्दावली की जाँच सच्चे परमेश्वर के स्वरूप की पदवी के ऊपर विचार विमर्श और हमारे ध्यान को परमेश्वर के सिद्ध स्वरूप यीशु के ऊपर लगाते हुए की। आइए अब हम हमारे अधिकार को देखें।

अधिकार

जब पवित्रशास्त्र मनुष्य की पहचान परमेश्वर के स्वरूप में करता है, तो यह स्वरूप की हमारी भूमिका को उस अधिकार के साथ सम्बद्ध करता है जिसे हमें पृथ्वी के ऊपर शासन करने के लिए दिया गया था। यह पूरी तरह से प्राचीन निकट पूर्वी विचार के अनुरूप है जहाँ पर राजा उनके देवताओं के उच्चतम स्वरूप थे क्योंकि वे उनकी ओर से शासन करते थे। परन्तु पवित्रशास्त्र अधिकार और पद को राजाओं की अपेक्षा ज्यादा मूल्य देता है। सभी मनुष्य – स्त्री और पुरूष, जवान और बूढ़े, राजकीय और सामान्य – परमेश्वर के उप-प्रतिनिधि, या सेवक राजा हैं, जिनका कार्य यह सुनिश्चित करना है कि उसकी इच्छा इस पृथ्वी पर पूरी हो। इसी कारण से परमेश्वर ने मनुष्य की रचना की, और यही वह भूमिका थी जिसे उसने तब उसे सौंपा था जब उसने हमें रचा था। एक बार फिर से उत्पत्ति 1:27-28 को सुनिए:

तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया; नर और नारी करके उस ने मनुष्यों की सृष्टि की। और परमेश्वर ने उनको आशीष दी : और उन से कहा, "फूलो- फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले सब जन्तुओ पर अधिकार रखो" (उत्पत्ति 1:27-28)।

जैसा कि यह प्रसंग इंगित करता है, जिस अधिकार को हमने परमेश्वर से प्राप्त किया उसके कम से कम तीन पहलू थे: हमें परमेश्वर के स्वरूप से पृथ्वी को भर देना था, हमें पृथ्वी के सारे प्राणियों के ऊपर शासन करना था, और हमें स्वयं पृथ्वी को अपने अधीन कर लेना था।

हम पृथ्वी को हमारी गिनती की वृद्धि के माध्यम से भर देते हैं, इस तरह से हम उसके जीवित स्वरूप को पूरे संसार में पुन: उत्पादित करते हैं। इसका अर्थ यह है कि हम संसार के सभी भागों में रह सकते और रहते हुए, परमेश्वर की प्रतिनिधत्व करने वाली उपस्थिति को पृथ्वी के प्राणियों में विभिन्न तरीकों से ले जाएँ, जिसमें उन्हें घरेलू बनाना, उनके निवासों की देखभाल करना, गलत व्यवहार से उनकी सुरक्षा करना सम्मिलित है। और स्वयं पृथ्वी को अपने अधीन बुद्धिमानी से कृषि के कार्यों को करने और पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों का भण्डार करने, इसी बंजर भूमि को एक सुन्दर, जीवन-दायी वाटिका में परिवर्तित करने के माध्यम से कर लेते हैं। सच्चाई तो यह है, कि सामान्य विचार जिसे हम उत्पत्ति 1 और 2 में पढ़ते हैं वह यह है कि मनुष्य को वास्तव में अदन की वाटिका की सीमाओं का विस्तार तब तक करते रहना था जब तक कि पूरा घर परमेश्वर के लिए उचित वास के रूप में रहने का स्थान नहीं बन जाता। परमेश्वर की विशेष उपस्थिति का सबसे अन्तिम लक्ष्य पूरी पृथ्वी को उसी तरह से भर देने का था जैसे मूल में अदन की वाटिका भरी हुई थी।

परमेश्वर के स्वरूप के रूप में हमारी भूमिका या पद सारी मनुष्यजाति को राजकीय स्तर के ऊपर ले आती है। इस पूरी पृथ्वी के ऊपर परमेश्वर ने हमें उसके शासन के प्रबन्धन के कार्य के लिये नियुक्त किया है। और यह पद हमें उच्च सम्मान देता है। हम *सभी* राजा एवं रानियाँ हैं। और हमें एक दूसरे के साथ उचित मात्रा में सम्मान और कृपा से व्यवहार करना चाहिए।

उत्पत्ति 1 स्पष्ट करती है कि आदम और हव्वा की – मानवता – को परमेश्वर के स्वरूप और समानता में सृजा गया था। और जबकि इसके अर्थ के कई पहलू हैं, वहाँ पर उत्पत्ति 1 में निश्चित ही यह धारणा निहित है, जो कुछ सीमा तक उत्पत्ति में भी स्पष्ट की गई है, कि आदम और हव्वा का परमेश्वर के स्वरूप में रचे जाने का आंशिक अर्थ उसकी सन्तान के रूप में रचा जाना था। और इसके साथ रची हुई बाकी की व्यवस्था के मध्य में यह असामान्य सौभाग्य और प्रतिष्ठा का पद भी है कि मनुष्य सन्तान होने के रूप में उसके साथ विशेष सम्बन्ध में है। हम परमेश्वर के राजकीय पुत्र और पुत्रियाँ हैं, और यह आश्चर्यजनक उच्च और असामान्य प्रतिष्ठा और सौभाग्य है जिस के साथ दायित्व का पद भी है।

- रेव्ह. बिल बर्नस्

जबकि परमेश्वर के सेवक राजा होने के नाते जिस प्रतिष्ठा और सम्मान को हमने प्राप्त किया उसकी पहचान करते हुए, हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि परमेश्वर फिर भी हम सबके ऊपर महान् अधिकार के साथ है। हम फिर भी सभी बातों में उसके प्रति जवाबदेह हैं। वह रचनाकार है; हम उसकी सृष्टि हैं। हम नहीं; अपितु वह परमेश्वर है। और हमें केवल अधिकार इसलिए दिया गया है क्योंकि वह हमें इसे प्रदान करता है। इसलिए, हमें इस दिए हुए अधिकार का उपयोग बहुत अधिक आदर और नम्रता के साथ करना चाहिए।

परमेश्वर के स्वरूप में सृजे जाने का क्या अर्थ होता है, को समझना हमारे लिए महत्वपूर्ण है। परमेश्वर के स्वरूप में सृजे हुए होने का अर्थ वास्तव में यह है कि हम उसकी समानता में रचे हुए हैं और हमारे पास सामर्थ्य है, और सामर्थ्य के अतिरिक्त, हम परमेश्वर को प्रस्तुत करते हैं। हम उत्तरदायी प्रतिनिधि हैं, और हमारा सम्बन्ध परमेश्वर के साथ है, परन्तु साथ ही साथ हमारे पड़ोसियों के साथ भी हमारा सम्बन्ध है। परमेश्वर के शासन के अधीन होने की हमारी आवश्यकता यह है कि हमें परमेश्वर के इच्छित किए हुए प्रयोजन के अनुसार जीवन यापन करने की लालसा करनी चाहिए...परन्तु हमने परमेश्वर के विरूद्ध पाप किया है, और यह सम्बन्ध – जो पहले से ही टूट गया है – को पुन: स्थापित किए जाने की आवश्यकता है। इसलिए, परमेश्वर के शासन के अधीन होने का अर्थ हमारे द्वारा कार्य करने से हम समाज में परमेश्वर को प्रतिबिम्बित करने के लिए सक्षम हो जाएंगे।

- रेव्ह. कैनन ऐल्फ्रेड सिबाहेने, पी एच डी.

पृथ्वी के ऊपर हमारा शासन सदैव हमारे महान् परमेश्वर और राजा की इच्छा के अधीन हैं। इसलिए उसके स्वरूप के पद में होने के नाते, हमें हमारी इच्छा को कभी भी लागू नहीं करना चाहिए। इसकी अपेक्षा, हमें यह देखने के लिए कार्य करना चाहिए कि परमेश्वर की इच्छा वैसे ही पृथ्वी पर पूरी हो जैसे स्वर्ग में पूरी होती है। और हमें इसे ऐसी करनी चाहिए जो कि उसको सारी महिमा देती है।

अब क्योंकि हमने मनुष्य को परमेश्वर के स्वरूप में उस दिए हुए पद या पदवी की खोज करते हुए विचार कर लिया है, इसलिए आइए हम परमेश्वर के हमें दिए हुए उन गुणों को देखें जो हमें इस भूमिका को पूरा करने में सामर्थी बनाते हैं।

गुण

विधिवत् धर्मविज्ञान ने पारम्परिक रूप से यह शिक्षा दी है कि परमेश्वर का स्वरूप मनुष्य के उन गुणों की विविधता में देखे जा सकते हैं जिन्हें वह हमारे साथ साझा करता है। हमने पहले ही देख लिया है कि हमारा पद परमेश्वर के सदृश है। वह सर्वोच्च सम्राट है, और हम ऐसे सेवक राजा हैं जिन्हें उसने उसकी ओर से शासन करने के लिए सारी पृथ्वी के ऊपर नियुक्त किया है। उदाहरण के लिए, हम सोच और तर्क और योजना बना सकते हैं। हम नैतिक निर्णयों को ले सकते हैं। और हमारे पास अमर आत्मा है। अब, परमेश्वर के गुण हमारी अपेक्षा असीम रूप से महान् और अधिक सिद्ध हैं। परन्तु उसके स्वरूप के रूप में, हम अभी भी इन निम्न तरीकों से उसके सदृश हैं।

हम हमारे ध्यान को गुणों की तीन श्रेणियों में केन्द्रित करेंगे जिन्हें मनुष्य परमेश्वर के साथ सामान्यत: साझा करता है। सर्वप्रथम, हम हमारे नैतिक गुणों को देखेंगे। दूसरा, हम हमारे तार्किक गुणों पर ध्यान देंगे। और तीसरा, हम हमारे आत्मिक गुणों की जाँच करेंगे। आइए हम हमारे नैतिक गुणों के साथ आरम्भ करें।

नैतिक

शब्द "नैतिक" का संकेत सही और अच्छे और बुरे और गलत में अन्तर करने की क्षमता की ओर है। पवित्रशास्त्र की घटना में, "सही" और "अच्छे" की पहचान उन अवधारणों, व्यवहारों और भावनाओं के रूप में होती है जिन्हें परमेश्वर मंजूर करता और आशीष देता है। और "बुरी" और "गलत" वह अवधारणाएँ, व्यवहार, और भावनाएँ हैं जिनकी परमेश्वर मनाही करता और जिन पर दण्ड लगाता है। और क्योंकि हम परमेश्वर के स्वरूप में रचे गए हैं, हमें इन विषयों में उसके दृष्टिकोण का आत्मबोध प्रदान किया गया है। यह सत्य है कि हमारा नैतिक न्याय मनुष्य के पाप में गिरने के कारण क्षतिग्रस्त हुआ है। परन्तु यह पूरी तरह से नष्ट नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त, विश्वासियों के लिए, यह बहाली की प्रक्रिया में चल रहा है।

अदन की वाटिका में आदम और हव्वा के नैतिक गुणों के ऊपर ध्यान दें। जब परमेश्वर ने अदन की वाटिका में मनुष्य को रखा, तो वे समझ गए थे कि उन्हें इसमें कार्य और इसकी देखभाल उत्पत्ति 2:15 में जैसे परमेश्वर ने कहा था ठीक वैसे ही करनी थी। और उन्होंने इन दायित्वों को नैतिक भलाई के रूप में पहचान लिया था। परन्त साथ ही उन्होंने समझ लिया था कि उन्हें भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के फल को नहीं खाना था क्योंकि परमेश्वर ने उत्पत्ति 2:17 में इसे मना किया था। कई बार मसीही विश्वासी यह सोचते हुए गलत हो जाते हैं कि आदम और हव्वा वृक्ष का फल खाने से पहले सही से गलत क्या है कि को नहीं जानते थे। परन्तु यह स्पष्ट है कि इस तरह का विचार गलत है। कुल मिलाकर, उत्पत्ति 3:2 और 3 में, हव्वा सर्प को कहने योग्य हुई थी कि उसे क्या करने की *अनुमति* थी और क्या *निषेध* किया गया था।

आदम और हव्वा ने निषेध किए हुए फल को खा लेने के पश्चात् ज्ञान को प्राप्त नहीं किया था। परन्तु पवित्रशास्त्र इसे नैतिक न्याय की शब्दावली में वर्णित नहीं करता है। जैसा कि हम उत्पत्ति 3:7 में पढ़ते हैं:

तब उन दोनों की आँखें खुल गई और उनको मालूम हुआ कि वे नंगे हैं (उत्पत्ति 3:7)।

शब्द "नंगे" यहाँ पर न केवल नग्नता के अर्थ को अपितु शर्म और असुरक्षा को भी समाविष्ट करता है। यह वही शब्द है जिसे यशायाह 47:3 में उपयोग किया गया है, जहाँ परमेश्वर ने कहा:

तेरी नग्नता उघाड़ी जाएगी और तेरी लज्जा प्रगट होगी। मैं बदला लूँगा और किसी मनुष्य को न छोड़ूँगा (यशायाह 47:3)।

निषेध किए हुए फल को खा लेने से आदम और हव्वा का ज्ञान में उनकी कमजोरियों के उजागर होने से वृद्धि हो गई। जब वे परमेश्वर की कृपा में आज्ञाकारी और सुरक्षित थे, तो उन्हें कोई भी बात से खतरा या नुक्सान नहीं था। परन्तु उन्होंने यह नहीं पहचाना कि उनकी सफलता और सुरक्षा का पूरी तरह से परमेश्वर की ओर से प्रबन्ध किया गया था, और केवल इसलिए क्योंकि वे उसके कृपा पात्र थे। इस तरह से, उन्होंने यह भी नहीं पहचाना कि जब वे पाप करेंगे, तो वे उसके प्रबन्ध और सुरक्षा को खो देंगे। परन्तु एक बार जब उन्होंने फल को खा लिया, तो उनके लिए ये बातें स्पष्ट हो गई। उन्होंने भले से बुरे की समझ के बारे में और अधिक नहीं सीखा, अपितु उन्होंने दोनों के परिणाम और अनुभव के बारे में और अधिक सीखा। सच्चाई तो यह है, कि जब बात मनुष्य के नैतिक गुणों की आती है, पाप में हमारा पतन वास्तव में हमारे नैतिक न्याय की शक्ति को कम कर देता है। जैसा कि पौलुस ने तीतुस 1:15 में कहा है:

पर अशुद्ध और अविश्वासियों के लिये कुछ भी शुद्ध नहीं, वरन् उनकी बुद्धि और विवेक दोनों अशुद्ध हैं (तीतुस 1:15)।

क्योंकि हमारी बुद्धि और विवेक दोनों भ्रष्ट हो गए हैं, पतित मनुष्य सही तरीके से भले और बुरे का मूल्यांकन नहीं कर सकता है। इस सम्बन्ध में, हम परमेश्वर के सबसे कमजोर स्वरूप बन गए हैं। परन्तु दु:ख भरा समाचार यहीं समाप्त नहीं होता है। हमने नैतिक तरीकों से *कार्य* - अर्थात् परमेश्वर को प्रसन्न करने वाले तरीकों से *कार्य करने* की क्षमता को भी खो दिया है। जैसा कि पौलुस अविश्वासियों के बारे में तीतुस 1:16 में आगे कहता है:

वे कहते हैं कि हम परमेश्वर को जानते हैं, पर अपने कामों से उसका इन्कार करते हैं; क्योंकि वे घृणित और आज्ञा न माननेवाले हैं, और किसी अच्छे काम के योग्य नहीं (तीतुस 1:16)।

और रोमियों 8:7-8 में वह इसे जोड़ देता है:

क्योंकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है, क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन है, और न हो सकता है। और जो शारीरिक दशा में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते (रोमियों 8:7-8)।

हम इस तरह के विचारों को पूरे पवित्रशास्त्र में पाते हैं, जिसमें लूका 6:43-45; यूहन्ना 15:4, 5; और इब्रानियों 11:6 भी सम्मिलित है।

मनुष्य के पाप में पतित होने के कारण आज के मनुष्य के रूप में हमारी नैतिक क्षमता के ऊपर गहरा प्रभाव पड़ा था। आप इसके एक महत्वपूर्ण पहलू को पहले ही उत्पत्ति 3 की कहानी में देख सकते हैं। आदम और हव्वा का पाप में गिर जाने के पश्चात्, उन्होंने क्या किया? वे परमेश्वर से छिपने लगे। उन्होंने अपने दायित्व से बचने का प्रयास किया। आप पहले से ही पाप के प्रभाव को वहाँ पर देख सकते हैं। आप निरन्तर उत्पत्ति 4 को पढ़ते जाएँ और तुरन्त कैन और हाबिल की कहानी पर पहुँचे और हम पाप के विनाशकारी होने को देख सकते हैं जब कैन अपने भाई की हत्या करता है। और तब कैन के वंशजों की कहानी आती है जो उनमें से ही निकल कर आए हैं और एक तरह से घमण्ड और अहंकार मनुष्य के प्रतीक बन गए हैं। और इस तरह से, वास्तव में, यदि आप मात्र उत्पत्ति की कथा को ही पढ़ें तो यह हमें संकेत देती है कि आदम के पाप के कितने गहरे प्रभाव थे। और तब जैसे ही हम पवित्रशास्त्र में आगे की ओर बढ़ते हैं तो हम इसके ऊपर कुछ धर्मवैज्ञानिक चिन्तनों को पाते हैं। यदि आप भजन संहिता 51, दाऊद के अंगीकार के प्रसिद्ध भजन के बारे में सोचें, तो वह कहता है कि वह अपनी माता के गर्भ में से ही पाप की दशा में था। आप जानते हैं, वहाँ पर दाऊद हमारे पाप की दशा को हमारे अस्तित्व के आरम्भ में ही रख देता है। यह ऐसा नहीं था जिसे हम बाद में अपने पूरे जीवन में सांस्कृतिक प्रभावों या इसी तरह की कुछ बातों से सीखते हैं। यह ऐसी बात है जो हममें बड़ी गहनता के साथ निहित है...और यह अपनी पूर्ण सिद्धता और सिद्ध शिक्षा

में नए नियम में आता है...उदाहरण के लिए हम पौलुस को यह शिक्षा देते हुए पाते हैं कि वे जो आत्मा के बिना हैं परमेश्वर के आत्मा की बातों को समझने के योग्य नहीं हैं – यह 1 कुरिन्थियों 2 में पाया जाता है। रोमियों 8 यह शिक्षा देता है कि कैसे वे जो शरीर में हैं, जो कि हम सभों में है, मसीह से अलग हैं, कैसे हम उन सभी बातों को कर सकते हैं जो परमेश्वर को प्रसन्न करती हैं...हमारे पास परमेश्वर के नवजीवन देने वाले अनुग्रह से अलग हम हमारे पापों की पूर्ण अक्षमता से मुड़ने और ऐसे कामों को करने की क्षमता है जो परमेश्वर की दृष्टि में प्रसन्नता के योग्य हो।

- डॉ. डेविड वानर्डूनेन

कुछ धर्मवैज्ञानिक परम्पराओं में, हमारी धार्मिकता और पवित्रता के साथ - हमारी नैतिक क्षमता की हानि को – इतना अधिक अच्छा सोचा गया है कि हमने पूरी तरह से परमेश्वर के स्वरूप और समानता को खो दिया है। परन्तु पवित्रशास्त्र फिर भी मनुष्य की पापी दशा को परमेश्वर के स्वरूप और समानता के रूप में इंगित करता है। उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 9:6 हत्या की निन्दा करती है क्योंकि मनुष्य अभी भी परमेश्वर के स्वरूप हैं। और याकूब 3:9 लोगों को श्रापित ठहराने की निन्दा करता है क्योंकि हम सभी परमेश्वर की समानता में रचे गए हैं। इस तरह से, अधिकांश धर्मवैज्ञानिक परम्पराओं ने यह सार निकाला है कि मनुष्य में परमेश्वर का स्वरूप और समानता का नुक्सान तो हुआ परन्तु यह नष्ट नहीं हुई है।

किसी भी विचार में, इवैन्जेलिकल अर्थात् सुसमाचारवादी इस बात पर सहमत हैं कि मनुष्य का पाप में पतन होने के कारण हमारे नैतिक गुणों की हानि हुई। परन्तु विश्वासियों के लिए : जब वे मसीह में विश्वास को लाते हैं तो एक खुश खबरी है, परमेश्वर हम में उसके स्वरूप को नवीनीकृत और पुनर्स्थापित या बहाल करता है। जैसा कि पौलुस ने इफिसियों 4:24 में लिखा, विश्वासी:

नये मनुष्यत्व को पहिन लो, जो परमेश्वर के अनुरूप सत्य की धार्मिकता, और पवित्रता में सृजा गया है (इफिसियों 4:24)।

जिस "नए मनुष्यत्व" का विवरण पौलुस देता है वह हमारे प्राण के प्रत्येक पहलू को सम्मिलित करता है जिसमें हमारे नैतिक निर्णय लेने की शक्ति और कामों को करने की हमारी क्षमता भी सम्मिलित है जो परमेश्वर को प्रसन्न करती है। हमारी समझ, हमारी धार्मिकता और हमारी पवित्रता सब कुछ को मसीह में पुनर्स्थापित कर दिया जाता है। और पुनर्स्थापना का यह कार्य हमें और अधिक "परमेश्वर के सदृश" बना देता है ताकि हम उसके अधिक स्पष्ट स्वरूप बन जाएँ।

हमारे नैतिक गुणों की इस समझ को अपने ध्यान में रखते हुए, आइए हम तार्किक गुणों की मुड़ें।

तार्किकता

परमेश्वर के स्वरूप के मनुष्य के धर्मसिद्धान्त, को मनुष्य की तर्कसंगता के साथ कई कारणों से जोड़ दिया जाता है। मनुष्य के पाप में पतन के संकेत के लिए पहली बात यह है, कि जबकि परमेश्वर का स्वरूप बुरी तरह से विकृत हुआ था, यह पूरी तरह से नष्ट नहीं हुआ था, और इसलिए यह हम में, यहाँ तक कि आज भी बना हुआ है, अर्थात् परमेश्वर का स्वरूप जिसे हम हमारे प्राणों में लिए चलते हैं। और कदाचित् हमारे समझने के लिए सर्वोत्तम तरीकों में से एक यह है कि हम कैसे सोचते और तर्कसंगत रूप से व्यवहार करते हैं, को समझना एक विचार है। दूसरे शब्दों में, मनुष्य, का उसके पतन होने के पश्चात् भी, उसमें निहित सोच के ऊपर आधारित हो कर उसकी निर्णयों की लेने की क्षमता, उस क्षमता में सही और बुरा क्या है, के मध्य अन्तर करने की समझ है। और यह स्पष्टता से इस सच्चाई की ओर संकेत करता है कि हम परमेश्वर की व्यवस्था, परमेश्वर की उस व्यवस्था के ज्ञान के साथ जो हमारे प्राणों, हमारी बुद्धि और हमारे विवेक में भर दी गई है, रचे गए हैं। और इस कारण, प्रेरित पौलुस यह कहता है कि, इस सच्चाई के पश्चात् भी कि परमेश्वर की व्यवस्था अन्यजातियों को यहूदियों की तरह नहीं दी गई है, वे

फिर अपने स्वभाव के कारण – हम सभों में हमारे स्वभाव के कारण – हमारे विवेक में परमेश्वर का भरा हुए ज्ञान है और इसलिए हम तार्किक निर्णयों को लेने के लिए सक्षम हैं।

- डॉ. जे हाले

कलीसिया के इतिहास के आरम्भ से ही, मसीहियों ने यह समझ लिया था कि मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप में हमारे तार्किक रूप से सोचने और जटिल भावनाओं की प्रक्रिया करने की हमारी क्षमता सम्मिलित है। हम उत्पत्ति 2:19, 20 में अदन की वाटिका में मनुष्य की तर्कसंगत क्षमता की महत्वपूर्णता को देख सकते हैं। इन वचनों में, आदम ने परमेश्वर के स्वरूप में होने के अपने अधिकार को पशुओं को उचित नाम देने में और उन्हें इस पृथ्वी को भरने और इसे अपने अधीन कर लेने के उचित आकार के मूल्यांकन में उपयोग किया।

इस में से कुछ तार्किक क्षमता पाप में हमारे गिरने के कारण खो गई, जैसा कि बाइबल के कई प्रसंगों में प्रमाणित होता है जो मनुष्य को अतार्किक और यहाँ तक कि कई बार बावला होने की बात करते हैं, जैसा कि सभोपदेशक 9:3 और यिर्मयाह 17:9 जैसे प्रसंग। और कई अन्य प्रसंग हमारी इस क्षमता के खो दिए जाने यहाँ तक कि जिन बातों को परमेश्वर हमें दिखाता और हम से कहता है, उन्हें समझने की क्षमता के खोने की बात करते हैं। उदाहरण के लिए, हम इसे व्यवस्थाविवरण 29:2, 3 में देखते हैं जहाँ पर इस्राएलियों की बुद्धि जिन आश्चर्यकर्मों को परमेश्वर ने उनके लिए किया था, की विशेषता को समझ नहीं सकी। और यूहन्ना 8:43-47 में, यीशु ने वर्णन किया कि अविश्वासी शैतान की सन्तान हैं, जो झूठ का पिता है। और इसके परिणामस्वरूप, वे झूठ में विश्वास करते और सच्चाई को स्वीकार करने में अक्षम हैं। इफिसियों 4:17-18 में पौलुस क्या कहता है को सुनिए:

जैसे अन्यजातीय लोग अपने मन की अनर्थ की रीति पर [चलते] हैं, तुम अब से फिर ऐसे न चलो। क्योंकि उनकी बुद्धि अन्धेरी हो गई है और उस अज्ञानता के कारण जो उनमें है और उनके मन की कठोरता के कारण वे परमेश्वर के जीवन से अलग किए हुए हैं (इफिसियों 4:17-18)।

पाप में हमारे पतन ने हमारी सोचने की क्षमता और ईश्वरीय दृष्टिकोण से इस संसार को देखने की समझ को हानि पहुँचाई है। परन्तु इसने इसे पूरी तरह से नष्ट नहीं किया है। हम में अभी भी तार्किक और भावनात्क योग्यताएँ विद्यमान हैं, यद्यपि जैसे उन्होंने किसी समय कार्य किया था वैसी अब कार्य नहीं करती हैं। उदाहरण के लिए, रोमियों 1:19, 20 में से हम शिक्षा पाते हैं कि यहाँ तक कि अविश्वासियों के पास भी यह जानने की कि परमेश्वर अस्तित्व में है, और उसके दृश्य गुणों और ईश्वरीय स्वभाव के कई पहलूओं की पहचान तार्किक क्षमता है।

जॉन कॉल्विन, जो 1509 से लेकर 1564 तक रहे, ने पतित, अविश्वासी मनुष्य की तार्किक सोच की क्षमताओं का मण्डन अपनी पुस्तक *इंस्टीट्यूट ऑफ क्रिश्चियन रीलिजन* में मनुष्य किया है। पुस्तक 2, के अध्याय 2, भाग 15 में उन्होंने लिखा है:

उनमें प्रदर्शित सच्चाई का सराहनीय प्रकाश हमें स्मरण दिलाता है, कि मनुष्य की बुद्धि, चाहे कितनी भी पतित और इसकी मूल निष्ठा से विकृत ही क्यों न हो, यह फिर भी उसके निर्माता की ओर से सराहनीय वरदानों के साथ विभूषित और निवेशित है। यदि हम यह दर्शाते हैं कि परमेश्वर ही मात्र सच्चाई का सोता है, तो हमें सचेत होना होगा, जिससे कि हम उसका अपमान होने, उसे अस्वीकार करने या जब कभी सत्य की निन्दा होने की संभावना हो तब उस से बच जाएं।

और विश्वासियों के लिए इससे भी अधिक उत्तम सुसमाचार है। जैसा कि पौलुस ने 1 कुरिन्थियों 2:11-16 में शिक्षा दी है, परमेश्वर ने हमें पवित्र आत्मा और मसीह का मन दिया है ताकि हम एक बार फिर से वास्तविकता को जिस तरीके से परमेश्वर समझता है समझ सकें। इससे अतिरिक्त, पौलुस ने कुलुस्सियों से कहा कि हमारी तार्किक योग्यता की पुनर्स्थापना परमेश्वर के स्वरूप का हम में नवीकृत होता हुआ एक पहलू है। कुलुस्सियों 3:10 में हम पढ़ते हैं कि:

नए मनुष्यत्व को पहिन लिया है, जो अपने सृजनहार के स्वरूप के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने के लिये नया बनता जाता है (कुलुस्सियों 3:10)।

परमेश्वर के स्वरूप में मूल रूप से ऐसा ज्ञान सम्मिलित था जो पवित्र और निष्कलंक था। परन्तु, जैसा कि हमने कहा, हमारा ज्ञान की मनुष्य के पाप में पतित होने के साथ ही हानि हो गई। जब हम मसीह के पास विश्वास में आते हैं, तो परमेश्वर हम में उसके स्वरूप की पुनर्स्थापना के कार्य को आरम्भ करता है। परिणामस्वरूप, हम अधिक अच्छी रीति से सोचने और समझने के योग्य हो जाते हैं, जिससे हमारे विचार और सोच और अधिक उसके अनुरूप हो जाते हैं।

पवित्रात्मा के उद्धार के कार्य के बारे में सबसे अधिक असामान्य बातों में से एक यह है कि पवित्रात्मा मनुष्य की तार्किक क्षमता की पुन: प्राप्ति, पुन: मरम्मत करता है जिसकी पहले पाप में पतन, पाप में दूषित होने के साथ हानि हुई थी। और पवित्रात्मा ऐसे कार्य करता है जैसे परमेश्वर का आत्मा उस क्षमता को एक बार फिर से उत्तेजित, मरम्मत और पूर्ण करता है। इसलिए, जब एक व्यक्ति के जीवन में क्रूस के बारे में, मसीह के बारे में उदघोषणा के साथ परमेश्वर का अनुग्रह आता है, तो मनुष्य एक बार पुन: उचित रीति से प्रतिक्रिया व्यक्त करने और यीशु को अपना मुक्तिदाता और प्रभु स्वीकार करने का निर्णय लेना आरम्भ कर सकता है। और इसके पश्चात् पवित्रात्मा तब भी समझ की आत्मा, एक ऐसी आत्मा के रूप में कार्य करता है, जो मनुष्य को समझने में सहायता प्रदान, सब कुछ आत्मसात्, सब कुछ के प्रति सोचने, सब कुछ का मूल्यांकन करने, और सच्चाई में परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चलने में सहायता प्रदान करता है।

- रेव्ह. अगुस जी. सत्यापुत्रा, अनुवादित

परमेश्वर के स्वरूप के नैतिक और तार्किक गुणों के पहलूओं को देख लेने के पश्चात्, हम अब हमारे ध्यान को हमारे आत्मिक गुणों के ऊपर केन्द्रित करने के लिए तैयार हैं।

आत्मिक

क्योंकि परमेश्वर का कोई भौतिक शरीर नहीं है, इसलिए धर्मशास्त्री अक्सर यह कहते हैं कि वह "एक आत्मा" है। इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि यह बात कोई अर्थ नहीं रखती है यह उसी तरीके से सीमित है जिस तरह से सृजी हुई आत्माएँ हैं। इसका अर्थ, अपेक्षाकृत, यह है कि वह प्रकृतिक लोक के ऊपर और इससे परे, अलौलिक लोक में वास करता है, जहाँ पर उसके पास किसी तरह का कोई भौतिक शरीर नहीं है।

यही वेस्टमिन्स्टर संक्षिप्त धर्म प्रश्नोत्तरी कहती है जब वह प्रश्न और उत्तर सँख्या 4 का वर्णन करती है। "परमेश्वर क्या है?," को पूछने के पश्चात् धर्म प्रश्नोत्तरी यह कहते हुए उत्तर देना आरम्भ करती है:

परमेश्वर एक आत्मा है।

इस मान्यता का कारण यूहन्ना 4:24 जैसे स्पष्ट प्रसंगों में मिलता है, जहाँ पर बड़ी स्पष्टता से कहा गया है:

परमेश्वर आत्मा है (यूहन्ना 4:2)।

परमेश्वर की आत्मा होने को पुराने नियम के वे प्रसंग भी प्रगट करते है जो परमेश्वर के आत्मा होने के लिए इंगित करते हैं। उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 1:2 सूचित करता है कि परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर सृष्टि के समय मण्डलाता था। और निर्गमन 31:3 वर्णित करता है कि परमेश्वर ने अपनी आत्मा से शिल्पकार बसलेल को मिलाप के तम्बू और इसके साजो सामान की रचना करने के लिए भर दिया। इस तरह के पुराने नियम के प्रसंगों में, "परमेश्वर की आत्मा" को स्वयं परमेश्वर, जो कि आत्मा है, के लिए उपयोग होने के लिए सूचित किया गया है।

जैसा कि हमने पहले के अध्याय में देखा, मनुष्य के पास एक आत्मिक अंग भी है। परमेश्वर ने हमें भौतिक शरीरों और अभौतिक प्राण या आत्माओं के साथ रचा है। इसलिए, हमारा अभौतिक आत्मिक अस्तित्व एक और गुण है जिसे परमेश्वर हमारे साथ साझा करता है। हम इसे विशेष रूप से उत्पत्ति 2:7 में देख सकते हैं, जहाँ पर परमेश्वर ने आदम को आदम के शरीर में अपने स्वयं के श्वास को फूँकते हुए रचा।

हमें इस ओर भी संकेत करना चाहिए कि परमेश्वर के द्वारा मनुष्य की सृष्टि मनुष्य को परमेश्वर के अन्य सृजे हुओं से अलग करती है। उत्पत्ति 1:30 और 7:15 जैसे प्रसंग, प्राण और आत्मा के लिए इब्रानी शब्दों का

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

उपयोग पशुओं के जीवनों का संकेत देने के लिए करते हैं। परन्तु केवल आदम ही ने परमेश्वर की ओर से सीधे उसमें श्वास के फूँके जाने को प्राप्त किया का उल्लेख हमें मिलता है। इसके अतिरिक्त, परमेश्वर की सारी सृष्टि में, केवल मनुष्य के लिए ही कहा गया है कि उसके पास उसके शरीर की मृत्यु होने के पश्चात् आत्मिक अस्तित्व रह जाएगा। केवल मनुष्य ही अन्तिम दिन, जैसा कि हम यूहन्ना 5:28, 29 में पढ़ते हैं, पुन: जी उठेगा। और प्रकाशितवाक्य 10:11-21:5 दिखाता है कि केवल मनुष्य ही सदैव के लिए या तो नरक के दण्ड के लिए भेजा जाएगा, या फिर उसे सदैव के लिए नए स्वर्ग और नई पृथ्वी के लिए पुरस्कृत किया जाएगा।

पहले की सदियों में, विधिवत् धर्मवैज्ञानिक अक्सर यह शिक्षा देते थे कि सम्प्रेषित किए जाने वाले गुण – या ऐसे गुण जिन्हें परमेश्वर के साथ साझा किया जा सकता है – हम में उसके स्वरूप के मौलिक पहलू थे। परन्तु अभी हाल के बाइबल आधारित अध्ययनों ने यह प्रकाशित किया है कि हम उसके स्वरूप को मूल रूप से हम दिए हुए पद के संदर्भों में रखे हुए हैं। परन्तु फिर भी, वे गुण जिन्हें परमेश्वर हमारे साथ साझा करता है अभी भी उसके स्वरूप का एक महत्वपूर्ण भाग है। यह गुण हम में हमारे द्वारा पाप में पतन होने के साथ क्षतिग्रस्त हो गए हैं। परन्तु वे इतनी बुरी तरह से क्षतिग्रस्त नहीं हुए हैं कि हम उसके स्वरूप ही होना समाप्त हो गए हैं। हम अभी भी सृष्टि के ऊपर उसके सेवक शासकों के रूप में पद को थामे हुए हैं। और उसके अनुग्रह और सहायता के साथ, हम अभी भी इस पृथ्वी पर उसकी इच्छा को पूरा करने के लिए सक्षम हैं।

अभी तक हमारे इस अध्याय में, हमने परमेश्वर के स्वरूप में पद या पदवी जिसे मनुष्य थामे हुए है, और प्राप्त किए हुए गुणों की सूची का पता लगाया है। अब हम हमारे तीसरे अन्तिम विषय: परमेश्वर के स्वरूप के रूप में हमारे सम्बन्ध को सम्बोधित करने के लिए तैयार हैं।

सम्बन्ध

जब परमेश्वर ने मनुष्य को उसके स्वरूप के पद के रूप में नियुक्त किया, तो उसने सम्बन्धों की विविधता को सृजा। परमेश्वर स्वयं महान् अधिपति, या सम्राट, और मनुष्यजाति उसके सेवक उसके जागीरदार या सेवक राजाओं के रूप में सेवा करने लगी। मनुष्य सह-शासक के रूप में एक दूसरे के साथ सम्बन्धित होने लगे। और बाकी की सृष्टि मनुष्य के शासन के अधीन हो गई।

हम परमेश्वर के स्वरूप के रूप में हमारे सम्बन्ध की तीन भागों में जाँच करेंगे। सर्वप्रथम, हम परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्ध के ऊपर ध्यान देंगे। दूसरा, हम अन्य मनुष्यों के साथ हमारे सम्बन्ध की जाँच करेंगे। और तीसरा, हम सृष्टि के साथ हमारे सम्बन्ध पर ध्यान केन्द्रित करेंगे। आइए सबसे पहले परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्ध को देखें।

परमेश्वर

जैसा कि हमने पहले के अध्याय में देखा, जब परमेश्वर ने मनुष्य की रचना की, तब वह हमारे साथ वाचा के सम्बन्ध में आ गया। यह वाचा प्राचीन निकट पूर्व में बड़े सम्राट या अधिराजा – इस घटना में परमेश्वर – और एक जागीरदार या सेवक राजा – इस घटना में मनुष्य के मध्य होने वाली सन्धि में थी। विशेष रूप से, मनुष्य के साथ परमेश्वर की वाचा, ने तीन लक्षणों: अधिराजा की उसके अधिपति के प्रति परोपकारिता, वह निष्ठा जिसे अधिराजा अपने अधिपति से पाना चाहता है, और अधिपति की निष्ठा या निष्ठाहीनता के परिणामस्वरूप होने वाले परिणामों को प्रदर्शित किया जो कि प्राचीन निकट पूर्व की सन्धियों में सामान्य पाए जाते थे। और जैसा कि प्राचीन निकट पूर्व की वाचाएँ अभी तक की पीढ़ियों में चलती आई हैं, परमेश्वर की मनुष्य के साथ बाँधी हुई वाचा भी हमारी अभी तक की पीढ़ियों में चलती आ रही हैं।

हम परमेश्वर के साथ हमारे वाचा के सम्बन्ध के तीनों पहलूओं: प्रथम परमेश्वर के चरित्र को प्रतिबिम्बित करने का दायित्व; दूसरा विशुद्ध आराधना का प्रचार करने का कर्तव्य; और तीसरा, परमेश्वर के राज्य को निर्माण करने के हमारे उत्तरदायित्व को जो उसके स्वरूप में हमारी भूमिका के प्रति विशेष हैं, के मुख्य अँशों को चिन्हांकित करेंगे।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

परमेश्वर के चरित्र का प्रतिबिम्ब

प्राचीन निकट पूर्व में झूठे देवताओं के राजाओं की प्रतिमाओं की तरह, सच्चे परमेश्वर के स्वरूप की मंशा उसके चरित्र को जहाँ कहीं भी वे प्रगट होते हैं, को प्रतिबिम्बित करने के लिए थी। और परमेश्वर का चरित्र पूरी तरह से विशुद्ध, पवित्र और धार्मिकता से भरा हुआ है। परिणामस्वरूप, वह मनुष्य के स्वरूप से भी विशुद्धता, पवित्रता और धार्मिकता को चाहता है। 1 पतरस 1:15-16 में, पतरस ने ऐसे लिखा है:

> **पर जैसा तुम्हारा बुलानेवाला पवित्र है, वैसे ही तुम भी अपने सारे चाल चलन में पवित्र बनो। क्योंकि लिखा है, "पवित्र बनो, क्योंकि मैं पवित्र हूँ" (1 पतरस 1:15-16)।**

और इब्रानियों का लेखक इब्रानियों 12:14 में ऐसे लिखता है:

> **सब से मेल मिलाप रखो, और उस पवित्रता के खोजी हो जिसके बिना कोई प्रभु को कदापि न देखेगा (इब्रानियों 12:14)।**

इसमें कोई सन्देह नहीं है, कि पतित मनुष्य अपने स्वयं के गुणों से कभी भी पूरी तरह से पवित्र नहीं हो सकता है। परमेश्वर के सम्मुख खड़े होने के लिए हम पूरी तरह से मसीह की पूर्ण पवित्रता के ऊपर निर्भर होते हैं। परन्तु फिर भी, परमेश्वर हम से हमारे जीवनों में पवित्रता की लालसा करने की मांग जैसे कि उसकी आज्ञाओं का पालन करने के द्वारा करता है।

> **संक्षेप में, मैं यह कहूँगा, कि परमेश्वर की नैतिक व्यवस्था, दस आज्ञाएँ, वास्तव में परमेश्वर के चरित्र को प्रतिबिम्बित करती हैं। वे हमें बताती हैं कि परमेश्वर कैसा है। और इसलिए, वे परमेश्वर से हटकर कोई ठोस नियम नहीं हैं। ऐसा नहीं था कि परमेश्वर वाद-विवाद कर रहा था – क्या मुझे उन्हें कहना चाहिए कि उन्हें हत्या करनी चाहिए या नहीं? नहीं ऐसा नहीं था, परमेश्वर ने छठी आज्ञा में हत्या न करने के लिए कहा था क्योंकि परमेश्वर मूल रूप में हत्यारा नहीं है। आप इसे सकारात्मक कह सकते हैं; इसमें कहा गया है कि हत्या नहीं करनी चाहिए, परन्तु हम कह सकते हैं, कि निर्दोष मानवीय जीव का हर सम्भव तरीके से सम्मान होना चाहिए। ऐसा ही परमेश्वर करता है; परमेश्वर इसी तरह का है। आज्ञा हमें कहती है कि व्यभिचार नहीं करना चाहिए। आप इसे सकारात्मक कह सकते हैं; उनके प्रति विश्वासयोग्य रहें जिनके साथ आपका घनिष्ठता का सम्बन्ध हैं। ठीक, ऐसा क्यों है? क्योंकि परमेश्वर इसी तरह का है। और इसलिए, क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था वास्तव में हमें बताती है कि वह क्या है और वह किसके सदृश है, क्योंकि हम परमेश्वर के संसार में रह रहे हैं और हम परमेश्वर के स्वरूप-को-संभाले हुए हैं जिसे उसने अपने जैसा ही बनाया है, उसकी तरह कार्य करने के लिए, यदि आप चाहते हैं - तो वह भाग है जिसमें उसका स्वरूप आवश्यक रूप से है – के लिए हम ऐसे कह सकते हैं कि यह परमेश्वर की व्यवस्था के लिए असम्भव होगा कि वह हमारे साथ न तो सम्बन्धित हो और न ही हम पर लागू हो यदि हम परमेश्वर की नैतिक व्यवस्था के बारे में बात कर रहे हैं।**
>
> **- डॉ. डेविड डब्लूयु. जोन्स**

दुर्भाग्य से, हम चाहे परमेश्वर की आज्ञा और उसकी वाचा के आदेशों का पालन करने का कितना भी प्रयास क्यों न करें – चाहे हम उसके प्रति निष्ठावान रहने के लिए कितने भी प्रयास क्यों न करें – हम में सदैव कमी रहेगी। पवित्रशास्त्र इसे सभोपदेशक 7:20; रोमियों 7:18, 19; और गलातियों 5:17 जैसे स्थानों में स्पष्ट कर देता है। जैसा कि प्रेरित यूहन्ना ने 1 यूहन्ना 1:8, 10 में लिखा है:

> **यदि हम कहें कि हम में कुछ भी पाप नहीं, तो अपने आप को धोखा देते हैं, और हम में सत्य नहीं...यदि हम कहें कि हमने पाप नहीं किया, तो उसे झूठा ठहराते हैं, और उसका वचन हम में नहीं है (1 यूहन्ना 1:8, 10)।**

और वेस्टमिन्स्टिर संक्षिप्त धर्म प्रश्नोत्तरी, के प्रश्न 149, हमारी अक्षमता के सिद्ध होने के सार को इस तरह से प्रस्ताव देती है:

> **कोई भी मनुष्य स्वयं में, और इस जीवन में प्राप्त किसी भी तरह के अनुग्रह से परमेश्वर की दस आज्ञाओं के पालन को पूर्णता से करने के लिए सक्षम नहीं है, परन्तु दोनों मिलकर उन्हें विचार, वचन और कार्य में योग्य बनाते हैं।**

इस सच्चाई के पश्चात् कि मसीह को छोड़कर, परमेश्वर का कोई भी स्वरूप, इस जीवन में उसके चरित्र को पूर्णता से प्रतिबिम्बित नहीं करता है, हम सभी हमारे पूर्ण मनुष्यत्व से पवित्रता और धार्मिकता की खोज के लिए बाध्य हैं। और परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा, हम उस प्रक्रिया के द्वारा उसका और अधिक स्पष्ट स्वरूप बन जाते हैं। इसलिए ही 2 कुरिन्थियों 3:18, में पौलुस ऐसा लिखने के योग्य हो सका:

> **परन्तु जब हम सब के उघाड़े चेहरे से प्रभु का प्रताप इस प्रकार प्रगट होता है, जिस प्रकार दर्पण में, तो प्रभु के द्वारा जो आत्मा है, हम उसी तेजस्वी रूप में अंश अंश करके बदलते जाते हैं (2 कुरिन्थियों 3:18)**

परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्धों को परमेश्वर के चरित्र के संदर्भ में प्रतिबिम्बित करने के हमारे दायित्व को देख लेने के पश्चात्, आइए हम विशुद्ध आराधना के प्रचार के हमारे कर्तव्य के ऊपर ध्यान दें।

विशुद्ध आराधना का प्रचार

सच्चाई यह है कि मनुष्य परमेश्वर के वास्तविक स्वरूप हैं जिसका यह है कि मूर्तियाँ और उसके अन्य मानव-रहित प्रस्तुतिकरण झूठे हैं। यद्यपि हमारा पतित सहज ज्ञान हमें सुझाव देता कि परमेश्वर की आराधना करना गढ़ी हुई प्रतिमाओं के माध्यम से करना अच्छा होगा। पवित्रशास्त्र इस विचार को अस्वीकार कर देता है। यह वह पाप था जिसे निर्गमन 32 में हारून ने किया था, जब उसने प्रभु की आराधना करने के लिए इस्राएल के उपयोग के लिए सोने का बछड़ा बनाया था। और निर्गमन 20:3, जहाँ मना की हुई खुदी हुई मूर्तियों और गढ़ी हुई प्रतिमाओं, स्पष्टता से दिखाई दिए जाने वाले प्रस्तुतिकरणों के द्वारा आराधना करने के लिए निषेधता को सम्बोधित कर रहे हैं। मूसा कदाचित् व्यवस्थाविवरण 4:15-16 में मूर्तियों के उपयोग को सम्बोधित कर रहा था, जहाँ वह ऐसे लिखता है:

> **इसलिये तुम अपने विषय में बहुत सावधान रहना। क्योंकि जब यहोवा ने तुम से होरेब पर्वत पर आग के बीच में से बातें की तब तुम को कोई रूप न दिखाई पड़ा, कहीं ऐसा न हो कि तुम बिगड़कर चाहे पुरूष चाहे स्त्री की मूर्ति खोदकर बना लो (व्यवस्थाविवरण 4:15-16)।**

मूसा ने उसके पाठकों को स्मरण दिलाया कि परमेश्वर ने स्वयं को किसी भौतिक ढांचे में प्रगट नहीं किया है क्योंकि वह उनकी आराधना की शुद्धता की सुरक्षा करना चाहता था। वह परमेश्वर के साथ इस्राएल के सम्बन्धों को अपने चारों ओर की जातियों की प्रथाओं और मूर्तियों के धर्मविज्ञान से विशुद्ध, अमिश्रित रखना चाहता था। वह उन्हें सोचने नहीं देना चाहता था कि परमेश्वर को किसी तरह की कोई वस्तु में बाँधा जा सकता है, या फिर ऐसी वस्तुएँ जिन्हें परमेश्वर अपने सम्मान के लिए उपयोग कर सकता है, या उसकी सहमति या सहायता को इनसे प्राप्त किया जा सकता है। परमेश्वर विशुद्ध परमेश्वर है, और उसके साथ जातियों के झूठे देवताओं के जैसा व्यवहार नहीं किया जा सकता है।

> **मैं नहीं सोचता कि परमेश्वर हम से प्राचीन निकट पूर्व संस्कृतियों जैसी आराधना को चाहता है, यहाँ तक कि वे चाहते थे कि हम प्रतिमाओं की आराधना करें। परमेश्वर एक प्रतिमा नहीं है; वह एक व्यक्ति है।**
>
> **सचमुच, हम हमारे समय में पाते हैं, कि वह तीन व्यक्तियों: पिता, पुत्र और पवित्रात्मा में है। परन्तु इतना कहने के पश्चात्, यदि आप एक बार फिर से एक मूर्ति की आराधना करना आरम्भ कर देते हैं, तो ऐतिहासिक रूप से क्या होता है कि हम अपनी सोच को उस प्रतिमा के साथ वार्तालाप यह सोचते हुए करते हैं कि हम स्वयं में सर्वोत्तम गुणों वाले हैं। इस तरह से, समय के व्यतीत होने के साथ आख़िर में, उस प्रतिमा के माध्यम से हम स्वयं ही की आराधना करते हैं।**

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

- डॉ. मॉट फ्राईडमैन

अभी तक हमने यह देखा कि परमेश्वर के साथ हमारी वाचा के सम्बन्ध में परमेश्वर चाहता है कि उसका स्वरूप परमेश्वर के चरित्र को प्रतिबिम्बित और विशुद्ध आराधना का प्रचार करे। आइए अब परमेश्वर के राज्य के निर्माण के अपने दायित्व को देखें।

परमेश्वर के राज्य का निर्माण

जब परमेश्वर ने मनुष्य को उत्पत्ति 1:28 में "पृथ्वी को भर" देने का आदेश दिया, तो वह हमें आदेश दे रहा था कि हम स्वयं के स्वरूप को पूरे संसार में चारों ओर भर दें। जैसा कि हमने देखा, प्राचीन राजा स्वयं की प्रतिमाओं को उनके राज्य में चारों ओर राजा की परोपकारिता और महानता को उसके लोगों को स्मरण दिलाने, लोगों को राजा की आज्ञापालन करने के लिए, और दिखाने के लिए खड़ा कर देते थे कि राजा उनके लोगों के साथ उनके मध्य में उपस्थित था। और उसी तरह से, जब मनुष्य पूरे संसार में चारों ओर फैल गया, तो उन्होंने जहाँ कहीं गए वहाँ परमेश्वर के शासन को प्रदर्शित किया। परन्तु यह प्रदर्शन मात्र संकेतात्मक नहीं था। क्योंकि मनुष्य परमेश्वर के उप-प्रतिनिधि या सेवक राजा के जैसे भी हैं, हम उसकी व्यवस्था को जहाँ कहीं हम जाते हैं वहीं ले जाते हैं। इस तरह से, हम जहाँ कहीं पर "पृथ्वी को अपने अधीन लेते हैं" जैसे कि उत्पत्ति 1:28 में परमेश्वर ने आदेश दिया, तो हम उसके नियुक्त उस कार्य को ही कर रहे हैं।

अब, हमें यह पहचानने की आवश्यकता है कि परमेश्वर का ही राज्य केवल संसार में नहीं है। परमेश्वर के राज्य का प्राथमिक विरोध शैतान के राज्य की ओर से आता है। सभी पतित मनुष्य इस शत्रु के राज्य में उत्पन्न होते हैं। और जब तक हम मसीह में विश्वास में नहीं आ जाते हैं, हम निरन्तर परमेश्वर के राज्य के विरूद्ध संघर्षरत् रहते हैं –चाहे हम इसे जानें या न जानें। जैसा कि पौलुस ने इफिसियों 2:1-2 में कहा है:

> **उस ने तुम्हें भी जिलाया, जो अपने अपराधों और पापों के कारण मरे हुए थे। जिनमें तुम पहिले इस संसार की रीति पर, और आकाश के अधिकार के हाकिम अर्थात् उस आत्मा के अनुसार चलते थे, जो अब भी आज्ञा न माननेवालों में कार्य करता है (इफिसियों 2:1-2)।**

परन्तु फिर भी, सभी मनुष्यों को परमेश्वर के राज्य के निर्माण का कार्य सौंपा गया है। और वे जो उसके शत्रु के राज्य का निर्माण करते हैं अपेक्षाकृत देशद्रोह के दोषी हैं।

परमेश्वर के सम्मान के साथ परमेश्वर का स्वरूप होने के नाते हमारे सम्बन्ध के ऊपर ध्यान देने के पश्चात्, आइए हम हमारे ध्यान को अन्य मनुष्यों की ओर मोड़ें।

मानवीय प्राणी

परमेश्वर के स्वरूप में रचे होने के कारण कई तरीके से मनुष्य के साथ हमारे सम्बन्ध में प्रभाव डालता है। परन्तु इस अध्याय में हमारे प्रयोजनों की प्राप्ति के लिए, हम केवल दो ही का उल्लेख करेंगे: अन्य लोगों के साथ प्रतिष्ठाजनक व्यवहार को किए जाने का हमारा दायित्व, और न्याय को बनाए रखने की महत्वपूर्णता। हम मानवीय प्रतिष्ठा के ऊपर ध्यान देने के साथ आरम्भ करेंगे।

प्रतिष्ठा

कल्पना करें कि एक माता और पिता ने अपने शिशु के तस्वीरों को लिया और उन्हें अपने परिवार के सदस्यों को भेज दिया है। परिवार के कुछ सदस्यों को अच्छा लगा, इसलिए उन्होंने तस्वीरों को अपने कमरों में टाँग दिया। अन्यों ने अपने बटुओं और जेब में अपने मित्रों को दिखाने कि लिए रख लिया, या उन्होंने फोटो संग्राहक में उन्हें सुरक्षित रखने, उनकी देखभाल किए जाने के लिए रख लिया। परन्तु परिवार के कुछ सदस्यों ने शिशु का अपमान, तस्वीरों को बिगाड़ते हुए, कूड़ेदान के पात्र में उन्हें फेंकते हुए किया। ठीक है, आप कल्पना कर सकते हैं इससे उन लोगों के द्वारा माता-पिता को कितनी अधिक ठेस पहुँचेगी जो उनके शिशु के प्रति इन तस्वीरों में इस तरह के अपमान को दर्शाते हैं। कुछ इसी तरह से सत्य मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप के साथ है। प्रत्येक मनुष्य उसके लिए मूल्यवान है क्योंकि प्रत्येक मनुष्य में उसका स्वरूप है। और इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक मनुष्य के साथ सम्मान और प्रतिष्ठा के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए।

उत्पत्ति 1:27, 28 और 5:1-3, से हम शिक्षा पाते हैं कि *प्रत्येक* मनुष्य में परमेश्वर का स्वरूप है। इसका सरोकार हमारे लिंग, उम्र, जातीयता, धन-सम्पत्ति, सामाजिक स्तर, स्वास्थ्य, क्षमताओं, दिखावे, या किसी अन्य बात से जो हमें एक-दूसरे से अलग करती है, के बिना है। हाँ, हमारे गुण परमेश्वर को विभिन्न स्तर पर प्रतिबिम्बित करते हैं। परन्तु प्रत्येक मनुष्य में परमेश्वर के स्वरूप की पर्याप्त मात्रा है जिसके साथ प्रतिष्ठा और सम्मान के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति परमेश्वर को किसी न किसी तरीके से प्रस्तुत करता है। और परमेश्वर के प्रतिनिधि के साथ बुरा व्यवहार स्वयं परमेश्वर का अपमान करना है।

उत्पत्ति 1 के अनुसार, मनुष्य होने के नाते हमारी पहचान के मूलभूत तथ्यों में से एक यह है कि परमेश्वर ने हमें अपने स्वरूप में सृजा है। तब कुछ अर्थों में, सभी मनुष्य परमेश्वर को प्रतिबिम्बित करने और इस संसार में उसे प्रस्तुत करने के लिए रचे गए हैं। और यह सभी मनुष्यों के साथ सत्य है और इसके बहुत ही गहरे नैतिक निहितार्थ इस बात के लिए हैं कि कैसे हमें प्रत्येक उस मनुष्य के साथ व्यवहार करना चाहिए जो हमारे सम्पर्क में आता है। सच्चाई तो यह कि यदि, सभी मनुष्य परमेश्वर को प्रस्तुत करते हैं, तब जिस तरीके से वे अन्य मनुष्यों के साथ व्यवहार करते हैं, वह बहुत अधिक सीमा में परमेश्वर के साथ हमारे सम्बन्ध को इंगित करता है। जिस सीमा में हम एक दूसरे मनुष्य का सम्मान करते हैं, उसी सीमा में हम उनके निर्माता परमेश्वर का सम्मान कर रहे हैं। जिस सीमा में हम अन्य मनुष्यों का अपमान, और उन्हें ठेस पहुँचाते और उनका दुरूपयोग करते हैं, हम उसी सीमा में परमेश्वर का अपमान कर रहे हैं। इसलिए, उदाहरण के लिए, उत्पत्ति 9:6 में, हत्या के पाप के लिए अधिकत्तम दण्ड मृत्यु दण्ड दिए जाना निर्धारित किया है क्योंकि मनुष्य परमेश्वर के स्वरूप में रचा गया है। इसलिए, जिसकी हत्या हुई वह परमेश्वर के स्वरूप का एक-वाहक था, और आपने स्वरूप-वाहक के ऊपर आक्रमण किया है, आप परमेश्वर पर आक्रमण कर रहे हैं। याकूब 3:9 में, हमें कहा गया है कि हम एक दूसरे को शाप न दें। इस कारण, अब, भौतिक आक्रमण नहीं अपितु मौखिक आक्रमण, कारण है क्योंकि मनुष्य परमेश्वर की समानता में निर्मित किया गया है। अक्षरश: उसी भाषा का उपयोग न करते हुए, परन्तु जैसा कि नीतिवचन 14:31 में कहा गया है:

[वह जो] कंगाल पर अंधेर करता, वह उसके कर्ता की निन्दा करता है, परन्तु [वह जो] दरिद्र पर अनुग्रह करता, वह उसकी महिमा [सम्मान]करता है (नीतिवचन 14:31)।

इस तरह, अब यहाँ विषय आर्थिक शोषण का है। चाहे भौतिक या मौखिक या आर्थिक, सिद्धान्त स्पष्ट है: कैसे हम परमेश्वर के स्वरूप-वाहकों के साथ प्रत्येक बात में स्वयं परमेश्वर के साथ किए जाने वाले व्यवहारों और प्रतिक्रियाओं के साथ व्यवहार करते हैं। और ध्यान देनेवाली मुख्य बात यह है कि यह सभी संदर्भ ऐसे हैं कि जिनमें मनुष्य की शब्दावली जितनी अधिक सामान्य हो सकता है, वह उतनी है। यह परमेश्वर की वाचा के लोगों के लिए ही सीमित नहीं है; यह जैसी मानवता होनी चाहिए वैसी मानवता है। इसलिए, चाहे कोई भी जाति क्यों न हो, कोई भी लिंग क्यों न हो, चाहे कोई भी सामाजिक आर्थिक स्तर क्यों न हो, चाहे एक व्यक्ति धार्मिक है या अधार्मिक, चाहे एक व्यक्ति नैतिक है या अनैतिक क्यों न हो, प्रत्येक मनुष्य परमेश्वर का स्वरूप-वाहक है, इसलिए उनके साथ सम्मान और प्रतिष्ठा के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए और जिस तरह से हम व्यवहार करते हैं वह उतना ही अधिक परमेश्वर के प्रति हमारे व्यवहार को इंगित करता है।

- डॉ. स्टीवन सी. रोय

सभी मनुष्यों की प्रतिष्ठा की पहचान करने के अतिरिक्त, यह न्याय को बनाए रखना भी महत्वपूर्ण है।

न्याय

पवित्रशास्त्र सीधे ही यह आदेश देता है कि हमें परमेश्वर के सारे स्वरूपों में न्याय को बनाए रखना है। उत्पत्ति 9:6 हत्या करने को इस आधार पर मना करता है कि सारे मनुष्य परमेश्वर के स्वरूप के अनुरूप रचे हुए हैं; और याकूब 3:9 उसी कारण से एक दूसरे को शाप देने के लिए मना करता है। हम साथ ही परमेश्वर के राज्य को देखते हुए न्याय को बनाए रखने की विशेषता को देख सकते हैं। जब परमेश्वर ने मनुष्य की रचना उसके राज्य के निर्माण के लिए की, तो उसने हमें वाचा की व्यवस्था को बनाए रखने के लिए, और उस व्यवस्था को उचित और न्यायसंगत तरीके से लागू करने के लिए आदेश दिया।

परमेश्वर के सेवक राजा होने की हमारी भूमिका हमें न्याय को बनाए रखने के लिए बाध्य करती है, को देखने के कई तरीकों में से एक सर्वोत्तम तरीका पवित्रशास्त्र अच्छे राजाओं के बारे में क्या कहता है देखना है। उदाहरण के लिए, 2 इतिहास 9:8 में, शीबा की रानी राजा सुलेमान की प्रंशसा में इन शब्दों को कहती है:

> **धन्य है तेरा परमेश्वर यहोवा, जो तुझ से ऐसा प्रसन्न हुआ कि तुझे अपनी राजगद्दी पर इसलिये विराजमान किया कि तू अपने परमेश्वर यहोवा की ओर से राज्य करे; तेरा परमेश्वर जो इस्राएल से प्रेम करके उन्हें सदा के लिये स्थिर करना चाहता था, उसी कारण उस ने तुझे न्याय और धर्म करने को उनका राजा बना दिया (2 इतिहास 9:8)।**

शीबा की रानी ने सत्य ही कहा है कि अच्छे राजा "यहोवा की ओर से राज्य" करते हैं, अर्थात् वह उस अधिकार को संचालन करते हैं जो उन्हें सौंपा गया है। और वे उस अधिकार का उपयोग न्याय और धार्मिकता को बनाए रखने के लिए करते हैं। क्योंकि सभी मनुष्य सुलेमान के जैसे एक ही भूमिका को साझा करते हैं, हम भी साथ ही हमारे साथी मनुष्यों के लिए न्याय को बनाए रखना साझा करते हैं।

हम न्याय के बारे में इसी तरह की भाषा को यशायाह के मसीहा या मसीह के आगमन – परमेश्वर के पृथ्वी के राज्य का अन्तिम राजा वाले विवरण में पाते हैं, जिसे हम यीशु के नाम से जानते हैं। यशायाह 42:1-4 के अनुसार:

> **वह अन्यजातियों के लिये न्याय प्रगट करेगा...न वह चिल्लाएगा और न ऊँचे शब्द से बोलेगा, न सड़क में अपनी वाणी सुनायेगा। और द्वीप के लोग उसकी व्यवस्था की बाट जोहेंगे (यशायाह 42:1-4)।**

जैसा कि सुलेमान और यीशु के नमूने दिखाते हैं, परमेश्वर के स्वरूप होने के नाते हमारी भूमिका में न्याय को सभी लोगों के लिए बनाए रखना महत्वपूर्ण भाग है।

अब क्योंकि हमने परमेश्वर के साथ और अन्य मनुष्यों के साथ हमारे सम्बन्धों का पता लगा लिया है, इसलिए आइए हम हमारे ध्यान को बाकी की सृष्टि की ओर करें।

सृष्टि

सृष्टि के प्रति हमारा सम्बन्ध का विवरण उत्पत्ति 1:27-28 में मिलता है। एक बार फिर से जाने पहचाने वचनों को सुनिए:

> **तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया; नर और नारी करके उसने मनुष्यों की सृष्टि की। और परमेश्वर ने उनको आशीष दी, और उन से कहा, "फूलो- फलो, और पृथ्वी में भर जाओ, और उसको अपने वश में कर लो; और समुद्र की मछलियों, तथा आकाश के पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले सब जन्तुओं पर अधिकार रखो" (उत्पत्ति 1:27-28)।**

परमेश्वर के स्वरूप में होने के नाते, मनुष्य को सृष्टि का उत्तरदायित्व दिया गया है। हमारा कार्य पृथ्वी को भरने और इसे अपने अधिकार में ले लेने, और इसमें रहने वालों के ऊपर अधिकार करने का है। धर्मशास्त्रियों ने अक्सर इस कार्य को "सांस्कृतिक आदेश" के रूप में सूचित किया है, क्योंकि इसमें हमसे संसार की कटाई करते हुए,

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

इसे बंजर से वाटिका में परिवर्तित करने, और मानवीय संस्कृति और समुदायों को प्रत्येक स्थान पर स्थापित करने की मांग के साथ की गई है। परन्तु इस का वास्तव में इसमें क्या बातें आवश्यक हैं?

जब मैं उत्पत्ति 1 और 2 को देखता है और उन उत्तरदायित्वों के बारे में सोचता हुँ जो हम मनुष्यों को दिए गए हैं, तो यह दो श्रेणियों में पाए जाते हैं। एक ओर तो, परमेश्वर हमसे कहता है, "फूल-फलो और इस पृथ्वी पर भर जाओ।" और यह और अधिक मानवीय जीवनों को लाने के लिए, इस सृष्टि में जिसे स्वयं परमेश्वर ने रचा है एक तरह से उप-निर्माता होने के लिए एक अद्‌भुत आदेश है। दूसरा आदेश, या दूसरा कार्य जो हमें दिया गया है, वह सृष्टि की देखभाल करना, इसका प्रबंधन परमेश्वर की महिमा के लिए करते हुए – इसे "अपने अधीन लेने" का है जिसे हमें उत्पत्ति के उन अध्यायों में कह दिया गया है। इस तरह से हमें न केवल पुनःउत्पादन के लिए ही कहा गया है, न केवल वृद्धि करने, अपितु जैसे जैसे मानवता विकास करती है, हमें उस सृष्टि जिसकी रचना परमेश्वर ने की है, की देखभाल करने के लिए कहा गया है। हमें निरन्तर सृष्टि के भीतर व्यवस्था को बनाए रखना है, हमें सृष्टि के भीतर ही फल को उत्पन्न करना है, हमें इसकी भूमि को जोतना है और उसकी देखभाल करनी है। हमें रचनात्मक प्रेरणा को लेना है जो परमेश्वर की ओर से आती है जिसे परमेश्वर ने हम में प्रत्यारोपित की हुई है, हमें अपने स्वरूप में बनाया है, और निरन्तर संसार के भीतर उत्पन्न करते रहना है जिसे उसने हमें दिया है।

- रेव्ह. डॉ. जॉन डब्लूयु येत्स

उत्पत्ति 2:8 में, हमें कहा गया है कि परमेश्वर ने अदन की वाटिका को लगाया। परन्तु हमें कभी नहीं कहा गया कि बाकी का संसार कैसा दिखाई देगा। हम जानते हैं कि परमेश्वर ने उत्पत्ति के 1 पूरे अध्याय में संसार को "अच्छा" कहा। और बाइबल के विद्वान इस बात पर सहमत होने की प्रवृत्ति रखते हैं, कि इस घटना में, इब्रानी भाषा का शब्द *टोअब*, जिसे हम "अच्छा" से भाषान्तरित करते हैं, का अर्थ दोनों अर्थात् "परमेश्वर को प्रसन्न करने वाला" और "भौतिक रूप से सुन्दर" होता है।

परन्तु फिर भी, सच्चाई यह है कि मनुष्य को पृथ्वी को अपने अधिकार में कर लेने का कार्य यह सूचित करता है कि वहाँ पर उनके लिए करने के लिए कार्य था।

उत्पत्ति 3:6 कहता है कि परमेश्वर अदन की वाटिका में चला फिरा करता था। इसलिए, यह उसके रहने के लिए उचित स्थान था। जैसा कि हमने पहले के अध्याय में देखा, उसने आदम और हव्वा को अदन की वाटिका में करने के लिये याजकीय कार्यों को दिया। इस लिए, वाटिका एक पवित्रस्थान या मन्दिर भी थी।

परन्तु यह सच्चाइयाँ सूचित करती हैं कि बाकी का संसार भिन्न था। सांस्कृतिक आदेश के माध्यम से, परमेश्वर ने मनुष्यों से अदन की सीमाओं से बाकी के संसार में फैल जाने और इसे अपने अधीन कर लेने की अपेक्षा की, जैसे जैसे वे फैलते चले जाएंगे, उन्हें पूरे संसार को परमेश्वर की वाटिका के पवित्रस्थान में परिवर्तित कर देना था।

संसार की कार्य करने के अतिरिक्त, मनुष्य को पशुओं के ऊपर शासन करने के लिए भी नियुक्त किया गया। और हम इस बात को देखने से एक सोच को पाते हैं कि कैसे परमेश्वर की व्यवस्था ने बाद में पशुओं के साथ मानवीय व्यवहार के लिए प्रबन्ध किया। घरेलु पशुओं के सम्बन्ध में: निर्गमन 20:10 उन्हें एक साप्ताहिक आराम को प्रदान करता है; व्यवस्थाविवरण 22:10 असमान जुए को जोते जाने की मनाही करता है, कदाचित् ऐसा क्योंकि उन्हें भौतिक तनाव होता होगा; और व्यवस्थाविवरण 25:4 दाँवते समय चलते हुए बैल का मुँह ने बान्धने की अनुमति देता है। जंगली जानवरों के सम्बन्ध में: निर्गमन 23:11 उन्हें अजोते हुए खेतों में से खाने की अनुमति देता है; और व्यवस्थाविवरण 22:6, 7 किसी जंगली पक्षी को जब वह अपने अण्डों को इकट्ठा कर रहा है तो उसे पकड़ने या मारने की मनाही देता है।

पृथ्वी और इसमें रहने वालों के ऊपर हमारा उत्तरदायित्व यह इंगित करता है कि संसार बस केवल हमारे भोग के लिए अस्तित्व में नहीं है। इसके विपरीत, यह मूलभूत रूप से परमेश्वर के उपयोग के लिए अस्तित्व में है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम

इस लिए, उसके स्वरूप होने के नाते, यह हमारा कार्य है कि हम उन चीजों की सुरक्षा और देखभाल करें जिन्हें "अच्छा" कह कर पुकारा गया है और इसकी कटाई इस तरीके से करें जो इसे नुक्सान पहुँचाने की अपेक्षा सुधारता हो।

परमेश्वर के स्वरूप में होने के कई निहितार्थ उन तरीकों के लिए हैं जिनमें हम परमेश्वर के साथ, अन्य लोगों के साथ, और हमारे चारों ओर के संसार के साथ सम्बन्धित होते हैं। पृथ्वी पर परमेश्वर के प्रतिनिधि होने के नाते हमारे विचार, व्यवहार और भावनाएँ इसे दर्शाती हैं। और वह हमें हमारी भूमिका को पूरा किए जाने के दायित्व के लिए व्यक्तिगत् रूप से उत्तरदायी ठहराता है जो उसके प्रयोजनों को पूरा करते, उसकी सृष्टि और उसमें रहने वालों के लिए लाभदायी हैं, और उसको महिमा लाते हैं।

सारांश

इस अध्याय में, हमने परमेश्वर के स्वरूप में मनुष्य की भूमिका के ऊपर ध्यान दिया है। हमने हमारे पद को झूठे देवताओं और सच्चे परमेश्वर के स्वरूप के साथ तुलना करते हुए खोज की है। हमने परमेश्वर के स्वरूप होने के नाते हमें प्राप्त नैतिक, तार्किक और आत्मिक गुणों का वर्णन किया है। और हमने उस सम्बन्ध के ऊपर ध्यान दिया है जो हमारा परमेश्वर, अन्य मनुष्यों और बाकी की सृष्टि के साथ है।

अधिकांश आधुनिक दर्शनशास्त्री पूरी तरह से मनुष्य-केन्द्रित हैं। वे यह विश्वास करते हैं कि परमेश्वर के ऊपर उसे अन्तिम अधिकार मानते हुए ध्यान केन्द्रित करना मनुष्य को दास के स्तर पर ले आता है; जबकि, मनुष्य के ऊपर परमेश्वर से अलग हो कर ध्यान केन्द्रित करना स्व-मूल्य और भरोसे को बढ़ावा देता है। परन्तु यह पूरी तरह से पीछे ले जाने वाली बात है। इस पृथ्वी पर परमेश्वर के स्वरूप होने के नाते, हमारे स्वयं की अपेक्षा बहुत अधिक मूल्य और अधिक विशेषता है जो कदाचित् ही हमें कभी मिले। परमेश्वर ने अपने स्वरूप को हमारे भीतर रख दिया है, हमें राजा बना दिया है। हम उसके शासन के प्रस्तुतिकरण के लिए उत्तरदायी होते हुए, उसके सौंपे गए अधिकार को लागू करते हुए, उसके चरित्र को व्यक्त करते, और उसकी इच्छा को पूरा करते हैं। मनुष्य का इससे अधिक और क्या बात सम्भवत: अधिक मूल्य और भरोसा ला सकती है?

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट में जायें - थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ ऐट थर्ड मिलेनियम